ISSN 2278-1633ANTIM JAN

गांधी दर्शन
अंतिम जन

वर्ष-7, अंकः 2, संख्या-52 जुलाई 2024 मूल्यः ₹20

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति संग्रहालय

समिति के दो परिसर हैं- गांधी स्मृति और गांधी दर्शन।

गांधी स्मृति, 5, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली पर स्थित है। इस भवन में उनके जीवन के अंतिम 144 दिनों से जुड़े दुर्लभ चित्र, जानकारियाँ और मल्टीमीडिया संग्रहालय (Museum) है। जिसमें प्रवेश निःशुल्क है।

दूसरा परिसर गांधी दर्शन राजघाट पर स्थित है। यहाँ 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश' प्रदर्शनी, डोम थियेटर और राष्ट्रीय स्वच्छता केंद्र संग्रहालय (Museum) है।

दोनों परिसर के संग्रहालय प्रतिदिन प्रातः 10 से शाम 6:30 तक खुलते हैं।
(सोमवार एवं राजपत्रित अवकाश को छोड़ कर)

गांधी दर्शन

अंतिम जन

वर्ष-7, अंक: 2, संख्या-52
जुलाई 2024

संरक्षक
विजय गोयल
उपाध्यक्ष, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

प्रधान सम्पादक
डॉ. ज्वाला प्रसाद

सम्पादक
प्रवीण दत्त शर्मा
पंकज चौबे

परामर्श
वेदाभ्यास कुंडू
संजीत कुमार

प्रबन्ध सहयोग
शुभांगी गिरधर

आवरण
संयोजन : अरूण सैनी

मूल्य : ₹ 20
वार्षिक सदस्यता : ₹ 200
दो साल : ₹ 400
तीन साल : ₹ 500

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23392796
ई-मेल : antimjangsds@gmail.com
2010gsds@gmail.com

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली-110002, की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेखकों द्वारा उनकी रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण उनके अपने हैं, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, राजघाट, नई दिल्ली के नहीं।
समस्त मामले दिल्ली न्यायालय में ही विचाराधीन।

मुद्रक
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092

इस अंक में

धरोहर
सत्याग्रह का जन्म - *मोहनदास करमचंद गांधी* 5

भाषण
'एक पेड़ माँ के नाम' - *श्री नरेंद्र मोदी* 11

मंडेला पर विशेष
पवित्र योद्धा - *नेल्सन मंडेला* 16
वैश्विक संदर्भ में गांधी और नेल्सन मंडेला की प्रासंगिकता - *प्रो. गजेन्द्र सिंह* 20
नेल्सन मंडेला, डॉ. आंबेडकर एवं गांधी के सत्य की खोज - *प्रो. कन्हैया त्रिपाठी* 24
इक्कीसवीं सदी में मदीबा और बापू के वैचारिक आदर्श - *संजीत कुमार* 30

विमर्श
अहिंसा बना स्वतंत्रता संग्राम का अस्त्र - *बनवारी* 36
खादी, क्या इतिहास बन रही है... - *लक्ष्मीदास* 45

पर्यावरण-विमर्श
पर्यावरण संरक्षण व जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का प्रभाव - *आनंद सौरभ* 49

कविता
विद्याधर कुलश्रेष्ठ 'कुसुम' की कविता 52

चित्रकारी 54

फोटो में गांधी 55

बाल कहानी
दोनों हाथ - *अर्चना त्यागी* 57
रेहू और राघव की लापरवाही - *पूजा भारद्वाज* 59

गांधी क्विज-3 61

गतिविधियाँ 62

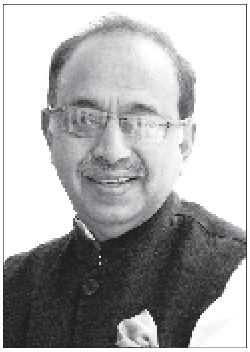

गांधी के सच्चे अनुयायी-मंडेला

नेल्सन मंडेला और महात्मा गांधी दोनों अलग-अलग समय के व्यक्ति थे, फिर भी मानवता की मदद के लिए मंडेला ने गांधीजी के संदेशों पर विश्वास किया और समाज पर अपनी अलग छाप छोड़ी। नेल्सन मंडेला और गांधी दोनों ही विश्व के ऐसे नेता हैं जिन्होंने अपने-अपने समय में उत्पीड़न और अन्याय के खिलाफ लड़ाई लड़ी और मानवता को अहिंसा अपनाने के लिए प्रेरित किया।

मंडेला ने गांधी को प्रेरणा स्रोत माना था और उनसे अहिंसा का पाठ सीखा। महात्मा गांधी और मंडेला में अनेक समानताएँ थी। जैसे दक्षिण अफ्रिका में रहते हुए गांधीजी ने रंगभेद का सामना किया और वहां लम्बा रंगभेद विरोधी आन्दोलन चलाया। अपने इस आन्दोलन के जरिये उन्होंने विरोध का एक नया तरीका दुनिया के सामने पेश किया। वह था सत्याग्रह।

महात्मा गांधी जी से प्रेरणा लेते हुए मंडेला जी ने भी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद का खूब विरोध किया। जीवनयापन के लिये वे एक कानूनी फर्म में क्लर्क बन गये परन्तु धीर-धीरे उनकी सक्रिय राजनीति में रुचि बढ़ती चली गयी। रंग के आधार पर होने वाले भेदभाव को दूर करने के उन्होंने राजनीति में कदम रखा। उन्हें मजदूरों को हड़ताल के लिये उकसाने और बिना अनुमति देश छोड़ने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर मुकदमा चला और 12 जुलाई 1964 को उन्हें उम्रकैद की सजा सुनायी गयी। सजा के लिये उन्हें जेल में भेजा गया किन्तु सजा से भी उनका उत्साह कम नहीं हुआ। उन्होंने जेल में भी अश्वेत कैदियों को लामबन्द करना शुरू कर दिया था। जीवन के 27 वर्ष कारागार में बिताने के बाद उनकी रिहाई हुई। रिहाई के बाद समझौते और शान्ति की नीति द्वारा उन्होंने एक लोकतान्त्रिक एवं बहुजातीय अफ्रीका की नींव रखी। वास्तव में नेल्सन मंडेला महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायी थे। उन्होंने गांधी के बारे में केवल किताबी ज्ञान प्राप्त नहीं किया। बल्कि उनकी शिक्षाओं और आदर्शो को अपने जीवन में ढाला और उस पर कार्य किया।

मंडेला गांधीजी के विचारों से इतने प्रभावित थे कि वे अपनी भारत यात्रा के दौरान तीन बार गांधी स्मृति आये और उन्होंने गांधीजी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

मंडेला के समय दक्षिण अफ्रिका और भारत के सम्बन्ध काफी आत्मीय थे। भारत ने अपने सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न और गांधी शांति पुरस्कार से उन्हें नवाजा था। दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपति बनने के बाद, जब नेल्सन मंडेला पहली बार भारत पहुंचे तो यहाँ उतरते ही भारत की पावन मिट्टी को उन्होंने चूमा था।

नेल्सन मंडेला की जयंती के अवसर पर इस बार अंतिम जन में उनके व्यक्तित्व पर विभिन्न आलेख शामिल किए गए हैं। जो आपको पसंद आएगा, ऐसी आशा है।

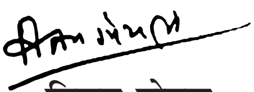

विजय गोयल

गांधी जी से सीखिए नैतिक आचरण

महात्मा गांधी ने सत्याग्रह की शुरुआत दक्षिण अफ्रीका में की थी। और इसका सफल प्रयोग भारत की आजादी तक करते रहे। इस लम्बी लड़ाई के बीच उनके जीवन में बहुत उतार-चढ़ाव आये, लेकिन उन्होंने इन सबके बावजूद अपनी नैतिकता की आभा को खोने नहीं दिया। उन्होंने अपने विरोधियों के प्रति व्यक्तिगत द्वेष कभी नहीं रखा। अपनी कार्यसिद्धि के लिए अनैतिक साधन का प्रयोग आजीवन नहीं किया। बिना लाभ-हानि की चिंता किये गांधीजी ने इसे अपनाए रखा। इस बात की पुष्टि हेतु मैं चंपारण की एक घटना का जिक्र करना चाहूँगा। चम्पारण में निलहों के खिलाफ गांधीजी आंदोलनरत थे। गांधीजी को वहां निलहों के विरूद्ध जांच कमेटी का सदस्य बनाया गया था। जांच से सम्बन्धित रिपोर्ट अंग्रेजों द्वारा गांधीजी के पास भेजी गयी। गांधी के एक सहयोगी ने उस रिपोर्ट को पहले ही पढ़ लिया और कुछ लोगों के सामने उस रिपोर्ट को लीक कर दिया। जब गांधी जी को इस बात का पता चला तो वे बहुत नाराज हुए। उनका कहना था कि ब्रिटिश सरकार ने विश्वास और निष्ठा पर ये रिपोर्ट हमें भेजी है। इसे पढ़कर, दूसरों के सामने जाहिर करना विश्वासघात होगा। गांधी के उच्च नैतिक बल का यह एक उदाहरण है कि वो कैसे अपने विरोधी तक का विश्वास और भरोसा नहीं टूटने देते थे।

क्या आज इस पैमाने पर हम टिक पाते हैं? नैतिकता केवल कहने, समझने और सुनने की शब्दावली नहीं है, यह व्यक्ति के चरित्र का एक पैमाना है, जिसके आधार पर इतिहास आपका-हमारा मूल्यांकन करता है और करता रहेगा। आज हम सब तरह की गलतियों के लिए दूसरों की ओर इंगित करते हैं। दरअसल यह अपनी गलती को छुपाने का एक जरिया मात्र है। गांधी का रास्ता कठिन जरूर है, पर इस रास्ते पर चलने के लिए मजबूरी का नाम महात्मा गांधी से अलग, मजबूती का नाम महात्मा गांधी की ओर चलना पड़ेगा। तभी हम उनके समान नैतिक बल प्राप्त कर पाएंगे। नैतिकता जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है। इसे अर्जित करके ही हम दूसरों पर अपना प्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकते हैं। गांधी जी का नैतिक बल ही उनके जीवन भर की पूँजी थी। इसके प्रभाव से ही दुनिया के सबसे ताकतवर साम्राज्य को उन्होंने पराजित किया।

'अंतिम जन' का ताजा अंक अब आपके हाथों में हैं। यह अंक आपको कैसा लगा, कृपया प्रतिक्रिया जरूर दें।

डॉ. ज्वाला प्रसाद

निदेशक

आपके ख़त

गांधी विचार की पत्रिका

महात्मा गांधी मात्र एक स्वतंत्रता सेनानी नहीं, अपितु एक समाज सुधारक, एक चिंतक और विचारक भी थे। उनके विचार और कार्य आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितना स्वतंत्रता संग्राम के वक्त थे। आजादी के संघर्ष के दौरान जनजागरण हेतु महात्मा गांधी देश के अनेक स्थानों पर घूमे। उन्होंने देखा कि भारत गंदगी से अटा पड़ा है। लोगों की आदत में साफ सफाई करना है ही नहीं। जबकि गांधीजी स्वच्छता को स्वतंत्रता से ज्यादा महत्वपूर्ण मानते थे। ऐसे में उन्होंने स्वच्छ भारत बनाने का सपना देखा।

बापू ने हमें सिर्फ स्वच्छता की कोरी सीख ही नहीं दी, बल्कि इसे स्वयं अपने निजी जीवन में उतार कर प्रेरक उदाहरण भी प्रस्तुत किया। अपने आश्रमों की साफ-सफाई एवं पेड़-पौधों की देखभाल वह स्वयं ही करते थे। सिर्फ भारत में ही नहीं, बल्कि दक्षिण अफ्रीका में भी उन्होंने साफ-सफाई का प्रेरक उदाहरण प्रस्तुत किया। वहां बापू जिस बस्ती में रहते थे, उस बस्ती, उसके आस-पास के क्षेत्र और शहरों की सफाई में उन्होंने बढ़-चढ़ कर योगदान दिया। जोहान्सबर्ग में स्थापित टॉल्सटॉय फार्म में उन्होंने स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा। यहां उन्होंने स्वयं टॉयलेट साफ कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। इस आश्रम में इतने आदमी इकठे रहते थे, फिर भी किसी को कहीं कूड़ा, मैला या जूठन पड़ी दिखाई नहीं देती थी।

गांधी के इन्हीं महान कार्यों को अंतिम जन पत्रिका हर माह लोगों के बीच पहुंचा रही है। इस पत्रिका के आलेखों को पढ़कर युवा पीढ़ी को यह पता चलता है कि वास्तव में गांधीजी ने जनसाधारण को कितनी असाधारण विचारधाराएं दी हैं। महात्मा गांधी को समझने के लिए एक अनिवार्य दस्तावेज है यह पत्रिका। संपादक मंडल को साधुवाद व शुभकामनाएं।

विजय कुमार
झोंटवाड़ा जयपुर राजस्थान

प्रासंगिक है गांधी का पर्यावरण दर्शन

'अंतिम जन' के जून अंक में पर्यावरण से संबंधित दो आलेख 'महात्मा गांधी और पर्यावरण दर्शन' और 'सामूहिक जनभागीदारी से पर्यावरण संरक्षण' बहुत प्रासंगिक लगे। वास्तव में महात्मा गांधी का पर्यावरण दर्शन आज भी प्रभावी है।

महात्मा गांधी ने प्रकृति संरक्षण पर खूब चिन्तन किया है। उन्होंने पर्यावरण को नुकसान पंहुचाने के विभिन्न कारकों और उसे संरक्षित रखने के उपायों पर अपने विचार रखे हैं। अपनी पुस्तक 'स्वास्थ्य की कुंजी' में उन्होंने स्वच्छ वायु पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। इसमें उन्होंने कहा है कि तीन प्रकार के प्राकृतिक पोषण की आवश्यकता होती है-हवा, पानी और भोजन, लेकिन इनमें स्वच्छ वायु सबसे आवश्यक है।

पर्यावरण के प्रति गांधीजी का दृष्टिकोण व्यापक था। उन्होंने देशवासियों से, तकनीकों के अंधानुकरण के विरुद्ध, जागरूक होने का आह्वान किया था। उनका मानना था कि पश्चिमी देशों के जीवन स्तर की नकल करने से, पर्यावरण का संकट पनप सकता है। यदि विश्व के अन्य देश भी आधुनिक तकनीकों के मौजूदा स्वरूप को स्वीकार कर लेंगे, तो पृथ्वी के संसाधन नष्ट हो जायेंगे।

आज वर्तमान हालात को देखते हुए महात्मा गांधी के प्रकृति संबंधी विचारों को अपनाना बहुत जरूरी हो गया है। वास्तव में प्रकृति का सम्मान करके, पर्यावरण को स्वच्छ करके और जल संसाधनों को बचाकर ही हम प्रकृति को बचा सकते हैं। अंतिम जन पत्रिका के लिए आपको साधुवाद।

महेश
विनोद नगर
दिल्ली

आप भी पत्र लिखें। सर्वश्रेष्ठ पत्र को पुरस्कृत कर, उपहार दिया जाएगा।

सत्याग्रह का जन्म

मोहनदास करमचंद गांधी

यहूदियों की उस नाटक-शाला में 11 सितम्बर, 1906 को हिन्दुस्तानियों की सभा हुई। ट्रान्सवाल के भिन्न-भिन्न शहरों से प्रतिनिधियों को सभा में बुलाया गया। परन्तु मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि जो प्रस्ताव मैंने तैयार किये थे, उनका पूरा अर्थ तो मैं खुद भी उस समय समझ नहीं पाया था। मैं इस बात का अनुमान भी उस समय नहीं लगा सका था कि उन प्रस्तावों को पास करने के परिणाम क्या आएँगे। सभा हुई। नाटक-शाला में पाँव रखने की भी जगह न रही। सब लोंगों के चेहरों पर मैं यह भाव देख सकता था कि कुछ नया काम हमें करना है, कुछ नई बात होने वाली है। ट्रान्सवाल ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन के अध्यक्ष श्री अब्दुल गनी सभा के सभापति-पद पर आसीन थे। वे ट्रान्सवाल के बहुत ही पुराने हिन्दुस्तानी निवासियों में से एक थे। वे महमद कासम कमरुद्दीन नामक विख्यात पेढी के साझेदार थे और उसकी जोहानिसबर्ग की शाखा के व्यवस्थापक थे। सभा में जितने प्रस्ताव पास हुए थे उनमें सच्चा प्रस्ताव तो एक ही था। उसका आशय इस प्रकार था: 'इस बिल के विरोध में सारे उपाय किये जाने के बावजूद यदि वह धारासभा में पास हो ही जाए, तो हिन्दुस्तानी उसके सामने हार न माने और हार न मानने के फलस्वरूप जो जो दु:ख भोगने पड़े उन सबको बहादुरी से सहन करें।'

यह प्रस्ताव मैने सभा को अच्छी तरह समझा दिया। सभा ने शांति से मेरी बात सुनी। सभा का सारा कामकाज हिन्दी में या गुजराती में ही चला, इसलिए किसी को कोई बात समझ में न आये ऐसा तो हो ही नहीं सकता था। हिन्दी न समझने वाले तामिल और तेलुगु भाइयों को इन भाषाओं के बोलने वाले लोगों ने सारी बातें पूरी तरह समझा दीं। नियमानुसार प्रस्ताव सभा के समक्ष रखा गया। अनेक वक्ताओं ने उसका समर्थन भी किया। उनमें एक वक्ता सेठ हाजी हबीब थे। वे भी दक्षिण अफ्रीका के बहुत पुराने और अनुभवी निवासी थे। उनका भाषण बड़ा जोशीला था। आवेश में आकर वे यहाँ तक बोल गये कि, 'यह प्रस्ताव हमें खुदा को हाजिर मान कर पास करना चाहिए। हम नामर्द बनकर ऐसे कानून के सामने कभी न झुकें। इसलिए मैं खुदा की कसम खाकर कहता हूँ कि इस कानून के सामने मैं कभी सिर नहीं झुकाऊँगा। मैं इस सभा में आये हुए सब लोगों को यह

ट्रान्सवाल ब्रिटिश इंडियन एसोसियेशन के अध्यक्ष श्री अब्दुल गनी सभा के सभापति-पद पर आसीन थे। वे ट्रान्सवाल के बहुत ही पुराने हिन्दुस्तानी निवासियों में से एक थे। वे महमद कासम कमरुद्दीन नामक विख्यात पेढी के साझेदार थे और उसकी जोहानिसबर्ग की शाखा के व्यवस्थापक थे। सभा में जितने प्रस्ताव पास हुए थे उनमें सच्चा प्रस्ताव तो एक ही था।

सलाह देता हूँ कि वे भी खुदा को हाजिर मानकर ऐसी कसम खायें।'

इस प्रस्ताव के समर्थन में अन्य लोगों ने भी तीखे और जोशीले भाषण किये। जब सेठ हाजी हबीब बोलते–बोलते कसम की बात पर आये, तब मैं चौंका और सावधान हो गया। तभी मुझे अपनी जिम्मेदारी का और हिन्दुस्तानी कौम की जिम्मेदारी का पूरा भान हुआ। आज तक कौम ने अनेक प्रस्ताव पास किये थे। अधिक सोचने–विचारने के बाद या नये अनुभवों के बाद उन प्रस्तावों में परिवर्तन भी किये गये थे। ऐसे भी मौके आये थे जब प्रस्ताव पास करने वाले सब लोगों ने उन प्रस्तावों पर अमल नहीं किया। पास किये हुए प्रस्तावों में परिवर्तन करना, प्रस्तावों से सहमत होने वाले लोगों का बाद में उन पर अमल करने से इनकार करना आदि सारी दुनिया के सार्वजनिक जीवन के सामान्य अनुभव की बातें हैं। परन्तु ऐसे प्रस्तावों में कोई ईश्वर का नाम बीच में नहीं लाता। सिद्धान्त की दृष्टि से सोचा जाएँ तो किसी निश्चय में और ईश्वर का नाम लेकर की गई प्रतिज्ञा में कोई भेद नहीं होना चाहिए। जब बुद्धिशाली मनुष्य सोच–समझ कर कोई निश्चय करता है, तो वह अपने निश्चय से कभी डिगता नहीं। उसकी दृष्टि में उस निश्चय का महत्त्व उतना ही होता है जितना कि ईश्वर को साक्षी रखकर की गई प्रतिज्ञा का। लेकिन दुनिया सैद्धान्तिक निर्णयों के आधार पर नहीं चलती। वह ईश्वर को साक्षी रख कर की गई प्रतिज्ञा और सामान्य निश्चय के बीच महासागर जितना भेद मानती है। किसी सामान्य निश्चय को बदलने में बदलने वाले को शर्म नहीं आती। परन्तु ईश्वर को साक्षी रख कर प्रतिज्ञा करने वाला मनुष्य जब प्रतिज्ञा का भंग करता है, तब वह खुद ही नहीं शरमाता है, समाज भी उसे धिक्कारता है और पापी मानता है। इस बात ने मानव–मन में इतनी गहरी जड़ जमा ली है कि कानून की दृष्टि में भी कसम खाकर कही गई बात अगर झूठी साबित हो, तो कसम खाने वाला आदमी अपराधी माना जाता है और उसे कड़ी सजा दी जाती है।

ऐसे विचारों से मरा हुआ मैं– जिसे गंभीर प्रतिज्ञाओं का काफी अनुभव था और जिसने प्रतिज्ञाओं के मीठे फल जीवन में चखे थे– सेठ हाजी हबीब के कसम वाले सुझाव से चौक उठा। मैंने उसके परिणामों का अनुमान एक क्षण में लगा लिया। इस घबराहट से मुझ में उत्साह और जोश पैदा हुआ। और यद्यपि मैं उस सभा में प्रतिज्ञा करने या दूसरों से कराने के इरादे से नहीं गया था, तो भी मुझे सेठ हाजी हबीब का सुझाव बहुत पसंद आया। लेकिन उसके साथ मुझे ऐसा भी लगा कि सभा में आये हुए सब लोगों को सारे परिणामों से परिचित करा देना चाहिए, प्रतिज्ञा का अर्थ सबको स्पष्ट शब्दों में समझा देना चाहिए; और उसके बाद वे प्रतिज्ञा कर सकें तो ही उसका स्वागत करना चाहिए और यदि न कर सकें तो मुझे समझ लेना चाहिए कि हिन्दुस्तानी कौम के लोग अभी अन्तिम कसौटी पर चढ़ने को तैयार नहीं हुए हैं। इसलिए मैंने सभापति से कहा कि मुझे सेठ हाजी हबीब के कथन का गूढ़ अर्थ सभा को समझाने की इजाजत दी जाएँ। मुझे इजाजत मिली और मैं खड़ा हुआ। मैंने जिस प्रकार लोगों को समझाया उसका सार आज जैसा मुझे याद है उस रूप में नीचे देता हूँ: 'मैं इस सभा को यह समझाना चाहता हूँ कि आज तक हम लोगों ने जो प्रस्ताव जिस रीति से पास किये हैं, उन प्रस्तावों और उन्हें पास करने की रीति में तथा इस प्रस्ताव और इसे पास करने की रीति में बहुत बड़ा भेद है। यह प्रस्ताव बहुत गंभीर है, क्योंकि इसके संपूर्ण अमल पर दक्षिण अफ्रीका में हमारी हस्ती का आधार है। इस प्रस्ताव को पास करने की जो रीति हमारे मित्र ने सुझाई है, वह जैसे गंभीर है वैसे ही नई भी है। मैं स्वयं तो इस रीति से यह प्रस्ताव पास कराने के इरादे से यहाँ नहीं आया था। इसका श्रेय केवल सेठ हाजी हबीब को ही मिलना चाहिए और इसकी जिम्मेदारी का भार भी उन्हीं के सिर पर है। मैं उन्हें इसके लिए अभिनन्दन देता हूँ। उनका सुझाव मुझे बहुत पसन्द आया है। लेकिन अगर उनका सुझाव आप स्वीकार करें, तो उनकी जिम्मेदारी में आप सब भी साझेदार बन जाएँगे। यह जिम्मेदारी क्या है, इसे आपको समझ ही लेना चाहिए; और कौम के सलाहकार और सेवक के नाते मेरा धर्म है कि यह जिम्मेदारी मैं आपको पूरी तरह समझा दूँ।

'हम सब एक ही सरजनहार परमात्मा में विश्वास करते हैं। भले ही मुसलमान उसे खुदा कहें और हिन्दू उसे ईश्वर कहें, लेकिन उसका स्वरूप एक ही है। उस ईश्वर को साक्षी रख कर या हमारे बीच रख कर यदि हम प्रतिज्ञा करें या कसम खायें, तो यह मामूली बात नहीं है। ऐसी

कसम खाकर यदि हम अपनी प्रतिज्ञा पर डटे न रहें, उसका भंग करें, तो हम कौम के, दुनिया के और ईश्वर के अपराधी बनेंगे। मैं तो यह मानता हूँ कि जो मनुष्य सावधान रह कर, शुद्ध बुद्धि से, प्रतिज्ञा करता है और बाद में उसे भंग करता है, वह अपनी इन्सानियत अथवा मनुष्यता खो देता है। और जिस प्रकार पारा चढ़ाया हुआ तांबे का सिक्का रुपया नहीं है यह पता चलते ही उसकी कोई कीमत नहीं रह जाती, बल्कि उस खोटे सिक्के का मालिक सजा का पात्र हो जाता है, उसी प्रकार झूठी कसम खाने वाले आदमी की भी कोई कीमत नहीं रह जाती; साथ ही वह इस लोक तथा परलोक दोनों में सजा का पात्र ठहरता है। सेठ हाजी हबीब ऐसी ही गम्भीर कसम खाने की बात सुझाते हैं। इस सभा में ऐसा एक भी आदमी नहीं है, जो बालक या बेसमझ कहा जाएँ। आप सब प्रौढ़ हैं, अनुभवी हैं। आपने दुनिया देखी है, आप में से कई लोग कौम के प्रतिनिधि हैं, और आप में से बहुत से लोगों ने कम-ज्यादा जिम्मेदारी के काम भी किये हैं। इसलिए इस सभा का एक भी आदमी ऐसा कहकर अपनी प्रतिज्ञा से मुकर नहीं सकता कि 'मैंने बिना समझे यह प्रतिज्ञा की थी।'

'मैं जानता हूँ कि प्रतिज्ञायें और व्रत किसी अत्यन्त महत्त्व के अवसर पर ही लिए जाते है, और लिए जाने चाहिए। चलते-फिरते प्रतिज्ञा लेने वाला मनुष्य उनके पालन में दृढ़ नहीं रह पाता है। परन्तु यदि दक्षिण अफ्रीका की हिन्दुस्तानी कौम के सामाजिक जीवन में प्रतिज्ञा लेने योग्य किसी अवसर की मैं कल्पना कर सकूँ, तो वह निश्चित रूप से यही अवसर है। ऐसे कदम अत्यन्त सावधानी से और डर-डर कर उठाये जाएँ, इसी में बुद्धिमानी है। लेकिन सावधानी और डर की भी एक सीमा होती है। उस सीमा तक अब हम पहुँच गये हैं। सरकार ने सभ्यता की मर्यादा का त्याग कर दिया है। उसने हमारे चारों ओर दावानल सुलगा दिया है। ऐसे समय भी अगर हम अपना सब कुछ दाँव पर न लगा दें और हाथ पर हाथ धरकर सोच-विचार में ही पड़े रहें, तो हम अयोग्य और कायर सिद्ध होंगे। इसलिए यह अवसर कसम खाने या

प्रतिज्ञा लेने का है, इसमें मुझे कोई शंका नहीं है। परन्तु यह कसम खाने की शक्ति हम में है या नहीं, यह तो प्रत्येक हिन्दुस्तानी को अपने लिए सोच लेना होगा। ऐसे प्रस्ताव बहुमत से पास नहीं हुआ करते। जितने लोग कसम खाते हैं उतने ही उस कसम से बंधते हैं। ऐसी कसमें दिखावे के लिए कभी नहीं खाई जातीं। उसका असर स्थानीय सरकार पर बड़ी (साम्राज्य) सरकार पर या भारत सरकार पर कैसा पड़ेगा, इसका कोई जरा भी विचार न करे। हर एक को अपने हृदय पर हाथ रखकर अपने हृदय की ही जाँच करनी चाहिए। और ऐसा करने के बाद यदि उसकी अन्तरात्मा उत्तर दे कि कसम खाने की शक्ति उसमें है, तो ही उसे कसम खानी चाहिए, और तभी उसकी कसम फल देने वाली सिद्ध होगी।

'अब दो शब्द इसके परिणामों के बारेमें भी कह दूँ। उत्तम आशा रखते हुए तो ऐसा कहा जा सकता है कि अगर हिन्दुस्तानी कौम का बड़ा भाग यह कसम खा सके और कसम खाने वाले सब लोग अपनी कसम पर डटे रहें, तो संभवत: यह बिल पास न हो; और अगर पास हो भी जाएँ, तो तुरन्त रद कर दिया जाय। संभव है कि बिल का विरोध करने की कसम खाने से हमें बहुत कष्ट न सहने पड़े। यह भी हो सकता है कि हमें जरा भी कष्ट न सहना पड़े। लेकिन कसम खाने वाले व्यक्ति का धर्म एक ओर यदि श्रद्धा से आशा रखने का है, तो दूसरी ओर किसी भी तरह की आशा न रखकर कसम खाने को तैयार रहने का है। इसीलिए हमारी लड़ाई के जो कड़वे से कड़वे परिणाम आ सकते हैं, उनका चित्र मैं सभा के सामने खींचना चाहता हूँ। मान लीजिए कि सभा में आये हुए हम सब लोग कसम खायें। हमारी संख्या अधिक से अधिक तीन हजार होगी। यह भी संभव है कि बाकी के दस हजार हिन्दुस्तानी यह कसम न खायें। शुरू में तो हमारी हँसी ही होगी। इसके सिवा, इस सारी चेतावनी के बावजूद यह बिलकुल संभव है कि कसम खाने वाले लोगों में से कुछ या बहुत से लोग पहली कसौटी में ही कमजोर मालूम पड़े। संभव है कि हमें जेल में जाना पड़े; जेल में जाकर अपमान सहने पड़े। वहाँ हमें भूख, ठंड और धूप का कष्ट भी भोगना पड़ सकता है; कड़ी मेहनत भी करनी पड़ सकती है। संभव है, जेल में उद्धत दारोगाओं की मार भी हमें खानी पड़े। हमारा जुर्माना हो सकता है और माल-सामान जब्त होकर नीलाम भी किया जा सकता है। अगर लड़ने वाले बहुत कम रह जाएँ, तो आज हमारे पास बहुत पैसा होने पर भी कल हम बिलकुल कंगाल बन सकते हैं। हमें देशनिकाले की सजा भी हो सकती है। और भूखों मरते-मरते व जेल के दूसरे कष्ट भोगते-भोगते हम में से कुछ लोग बीमार भी पड़ सकते हैं और कुछ मर भी सकते हैं। इसलिए संक्षेप में कहा जाए तो यह बिलकुल असंभव नहीं कि हम जितने भी दु:खों ओर कष्टों की कल्पना कर सकते हैं उतने सब हमें भोगने पड़े। इसलिए बुद्धिमानी की बात यही होगी कि यह सब हमें सहना पड़ेगा ऐसा मानकर ही हम कसम खायें। मुझसे कोई पूछे कि इस लड़ाई का अन्त क्या होगा और कब होगा, तो मैं कह सकता हूँ की सारी कौम यदि इस कसौटी में से पूरी तरह पार हो जाए, तो लड़ाई का फैसला तुरन्त हो जाएगा। परन्तु यदि हम में से बहुत लोग कष्टों की आँधी आने पर गिर जाएँ या फिसल जाएँ, तो यह लड़ाई लम्बी चलेगी। फिर भी इतना तो मैं साहस और निश्चय के साथ कह सकता हूँ कि जब तक मुट्ठीभर लोग भी अपनी प्रतिज्ञा को जीवित रखने वाले होंगे तब तक हमारी इस लड़ाई का एक ही अंत आयेगा। वह यह कि लड़ाई में हमारी निश्चित विजय होगी।

'अब मैं अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारी के बारेमें दो शब्द कह दूँ। यदि एक ओर मैं आपको प्रतिज्ञा लेने में रहे खतरे बता रहा हूँ, तो दूसरी ओर मैं आपको कसम खाने की प्रेरणा भी दे रहा हूँ। और ऐसा करते हुए मैं अपनी जिम्मेदारी को अच्छी तरह समझ रहा हूँ। यह भी हो सकता

यह भी संभव है कि बाकी के दस हजार हिन्दुस्तानी यह कसम न खायें। शुरू में तो हमारी हँसी ही होगी। इसके सिवा, इस सारी चेतावनी के बावजूद यह बिलकुल संभव है कि कसम खाने वाले लोगों में से कुछ या बहुत से लोग पहली कसौटी में ही कमजोर मालूम पड़े। संभव है कि हमें जेल में जाना पड़े; जेल में जाकर अपमान सहने पड़े। वहाँ हमें भूख, ठंड और धूप का कष्ट भी भोगना पड़ सकता है; कड़ी मेहनत भी करनी पड़ सकती है। संभव है, जेल में उद्धत दारोगाओं की मार भी हमें खानी पड़े।

है कि आज के आवेश के कारण या गुस्से के कारण इस सभा में उपस्थित लोगों का बड़ा भाग प्रतिज्ञा ले-ले, परन्तु संकट के समय निर्बल सिद्ध हो और केवल मुट्ठीभर लोग ही अंतिम अग्नि-परीक्षा का सामना करने के लिए रह जाए। उस स्थिति में भी मेरे जैसे के लिए तो एक ही मार्ग रह जाएगा: 'मर जाना किन्तु कानून के सामने सिर न झुकाना।' मान लीजिए कि ऐसी स्थिति आ जाएँ- ऐसा होने की जरा भी संभावना नहीं है, फिर भी हम मान लें - जब सारे लोग अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दें और मैं अकेला ही रह जाऊँ, तो भी मेरा विश्वास है कि मैं अपनी प्रतिज्ञा का भंग नहीं करूँगा। मेरे इस कथन का उद्देश्य आप सब समझ लें। यह अभिमान की बात नहीं है, परन्तु मुख्यत: इस मंच पर बैठे हुए हिन्दुस्तानी नेताओं को सावधान करने की बात है। अपना उदाहरण लेकर मैं नेताओं से नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि आप में अकेले रह जाने पर भी अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने का निश्चय अथवा वैसा करने की शक्ति न हो तो आप प्रतिज्ञा न लें; इतना ही नहीं, लोगों के सामने यह प्रस्ताव रखा जाएँ और वे प्रतिज्ञा लें उससे पहले लोगों के सामने आप अपना विरोध प्रकट करें और स्वयं उस प्रस्ताव का समर्थन न करें। यद्यपि हम सब साथ मिलकर यह प्रतिज्ञा लेना चाहते है, फिर भी कोई इसका यहि अर्थ न करे कि हम में से कोई एक या बहुतेरे लोग अपनी प्रतिज्ञा का भंग कर दें, तो बाकी के लोग स्वभावत: उसके बन्धन से मुक्त हो सकते हैं। सब कोई अपनी-अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह समझ कर स्वतंत्र रूप से ही प्रतिज्ञा लें और यह समझ कर ले कि दूसरे लोग कुछ भी करें, हम तो मरते दम तक उसका पालन करेंगे।'

इतनी बात कहकर मैं बैठ गया। लोगों ने संपूर्ण शांति रखकर मेरा एक-एक शब्द सुना। कौम के दूसरे नेता भी बोले। सब ने अपनी जिम्मेदारी तथा श्रोताओं की जिम्मेदारी की चर्चा की। इसके बाद सभापति खड़े हुए। उन्होंने भी सारी स्थिति स्पष्ट की। अंत में समस्त सभा ने खड़े होकर, हाथ ऊँचे करके और ईश्वर को साक्षी रखकर यह प्रतिज्ञा ली कि 'बिल पास होकर यदि कानून का रूप ले-ले तो हम उसके सामने सिर नहीं झुकायेंगे।' उस दृश्य को मैं जीवन में कभी भूल नहीं सकता। लोगों के उत्साह का पार न था। दूसरे ही दिन उस नाटकशाला में कोई दुर्घटना घटी और सारी नाटक-शाला आग में जलकर खाक हो गई। तीसरे दिन लोग मेरे पास नाटक-शाला के जलने के समाचार लेकर आये और यह कह कर कौम को बधाई देने लगे कि नाटक-शाला का जलना एक शुभ शकुन है; जिस तरह नाटक-शाला जलकर खाक हो गई उसी तरह वह बिल भी जलकर खाक हो जाएगा। ऐसे चिह्नों का मुझ पर कभी असर नहीं हुआ, इसलिए मैंने इस घटना को कोई महत्त्व नहीं दिया। इस बात का उल्लेख मैंने यहाँ केवल लोगों के शौर्य और श्रद्धा का दर्शन कराने के लिए ही किया है। हिन्दुस्तानी कौम के शौर्य और श्रद्धा के अनेक प्रमाण आगे के प्रकरणों में पाठकों के सामने आयेंगे।

ऊपर की महान सभा होने के बाद कार्यकर्ता चुपचाप बैठे न रहे। जगह-जगह सभायें की गई और हर सभा में सर्वानुमति से प्रतिज्ञायें ली गई। अब इंडियन ओपीनियन में खूनी कानून ही चर्चा का मुख्य विषय बन गया।

> ***यद्यपि हम सब साथ मिलकर यह प्रतिज्ञा लेना चाहते है, फिर भी कोई इसका यहि अर्थ न करे कि हम में से कोई एक या बहुतेरे लोग अपनी प्रतिज्ञा का भंग कर दें, तो बाकी के लोग स्वभावत: उसके बन्धन से मुक्त हो सकते हैं। सब कोई अपनी-अपनी जिम्मेदारी को पूरी तरह समझ कर स्वतंत्र रूप से ही प्रतिज्ञा लें और यह समझ कर ले कि दूसरे लोग कुछ भी करें।***

दूसरी ओर, स्थानीय सरकार से मिलने के कदम भी उठाये गये। एक प्रतिनिधि-मंडल उपनिवेश मंत्री श्री डंकन से मिलने गया और अन्य बातों के साथ उसने कौम के लोगों द्वारा ली गई प्रतिज्ञा की बात भी उनसे कही। सेठ हाजी हबीब ने जो प्रतिनिधि मंडल के एक सदस्य थे, कहा: 'अगर मेरी पत्नी की अंगुलियों की छाप लेने कोई अधिकारी आयेगा, तो मैं अपने गुस्से को जरा भी काबू में नहीं रख सकूँगा। मैं उसे जान से मार दूँगा और खुद भी मर जाऊँगा।' उपनिवेश-मंत्री क्षणभर तो सेठ हाजी हबीब के मुँह की ओर देखते रहे। फिर बोले: ष्यह कानून स्त्रियों पर लागू किया जाय या न किया जाय, इस प्रश्न पर सरकार सोच रही है। और इतना विश्वास तो मैं इसी समय आपको दिला सकता हूँ कि स्त्रियों से सम्बन्ध रखने वाली इस कानून की

धारायें वापस ले ली जाएगी। इस सम्बन्ध में आपकी भावनाओं को सरकार समझ गई है और वह उनका सम्मान करना चाहती है। परन्तु जहाँ तक दूसरी धाराओं का सम्बन्ध है, मुझे यह बताते हुए दु:ख होता है कि सरकार उनके विषय में दृढ़ है और आगे भी दृढ़ रहेगी। जनरल बोथा चाहते हैं कि आप पूरा विचार करके यह कानून स्वीकार कर लें। सरकार गौरों के अस्तित्व के लिए इस कानून को जरूरी मानती है। कानून के उद्देश्यों की रक्षा करते हुए उसकी तफसीलों के बारेमें आप कोई सुझाव रखेंगे, तो सरकार अवश्य उन पर ध्यान देगी। इसलिए प्रतिनिधि-मंडल को मेरी सलाह है कि इस कानून को स्वीकार करके आप तफसीलों के बारेमें ही अपने सुझाव सरकार के समक्ष रखेंगे तो आपका हित होगा।' उपनिवेश-मन्त्री के साथ प्रतिनिधि मंडल की जो दलीलें हुई उन्हें मैं यहाँ नहीं दे रहा हूँ, क्योंकि वे सब दलीलें पिछले प्रकरणों में आ चुकी हैं। उपनिवेश-मंत्री के समक्ष इन दलीलों को प्रस्तुत करने में केवल भाषा का ही भेद था- दलीलें सब वही थीं। प्रतिनिधि मंडल ने यह कहकर कि आपकी सलाह के बावजूद कोई हिन्दुस्तानी इस कानून को स्वीकार नहीं करेगा और स्त्रियों को कानून से मुक्त रखने के इरादे के लिए सरकार का आभार मानकर उपनिवेश मंत्री से बिदा ली। यह कहना कठिन है कि इस खूनी कानून से स्त्रियों की मुक्ति हिन्दुस्तानी कौम के आन्दोलन के कारण हुई या सरकार ने ही अधिक सोच-विचार कर श्री कर्टिस की वैज्ञानिक पद्धति को अस्वीकार कर दिया और कुछ हद तक लौकिक व्यवहार को नजर में रखकर यह छूट दी। सरकार का दावा यह था कि वह हिन्दुस्तानी कौम के आन्दोलन के कारण नहीं परन्तु स्वतंत्र रूप से ही इस निर्णय पर पहुँची थी। जो भी हो, परन्तु कौम ने तो काकतालीय न्याय से यह मान लिया कि केवल उसके आन्दोलन का ही यह परिणाम आया है; और इससे उसका लड़ने का उत्साह बढ़ गया। हम में से कोई यह जानता नहीं था कि कौम के इस निश्चय को अथवा आन्दोलन को क्या नाम दिया जा सकता है। उस समय मैंने इस आन्दोलन को 'पैसिव रेजिस्टेन्स' का नाम दिया था। उस समय तो मैं 'पैसिव रेजिस्टेन्स' का गूढार्थ भी पूरी तरह जानता या समझता नहीं भी। मैं केवल इतना ही समझा था कि किसी नवीन सिद्धान्त का जन्म हुआ है। हमारी लड़ाई ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती गई त्यों-त्यों 'पैसिव रेजिस्टेन्स' नाम के कारण उलझन बढ़ती गई और इस महान संग्राम को केवल अंग्रेजी नाम ही देना मुझे लज्जास्पद लगा। इसके सिवा, ये शब्द ऐसे थे जो कौम की जबान पर चढ़ भी नहीं सकते थे। इसलिए जो कोई इस संग्राम के लिए उत्तम शब्द खोज निकाले उसके लिए मैंने इंडियन ओपीनियन में एक छोटे से इनाम की घोषणा की। कुछ नाम मेरे पास आये। उस समय तक इंडियन ओपीनियन में इस लड़ाई के अर्थ की अच्छी तरह चर्चा हो चुकी थी। अत: यह कहा जा सकता है कि प्रतिस्पर्धियों के सामने नाम की खोज करने के लिए पूरी सामग्री थी। श्री मगनलाल गांधी ने भी इस स्पर्धा में भाग लिया। उन्होंने 'सदाग्रह' नाम भेजा। यह नाम पसंद करने का कारण बताते हुए उन्होंने लिखा कि हिन्दुस्तानियों का यह आन्दोलन एक महान 'आग्रह' है और यह आग्रह 'सद्' अर्थात् शुभ है, इसीलिए उन्होंने यह नाम चुना है। उनकी दलील का सार यहाँ मैंने थोड़े में दिया है। यह नाम मुझे पसंद आया। परन्तु जिस वस्तु का समावेश मैं सुझाये हुए नाम में करना चाहता था वह इसमें नहीं आती थी। इसलिए मैने 'द्' का 'तूर' करके उसमें 'य' जोड़ दिया और 'सत्याग्रह' नाम बना दिया। सत्य के भीतर शांति का समावेश मानकर और किसी भी वस्तु का आग्रह करने से उसमें बल उत्पन्न होता है इसलिए आग्रह में बल का समावेश करके मैंने भारतीयों के इस आन्दोलन को 'सत्याग्रह' - अर्थात् सत्य और शांति से उत्पन्न होने वाले बल- का नाम दिया और उसी नाम से इसका परिचय कराया। और तब से 'पैसिव रेजिस्टेन्स' शब्द का उपयोग इस आन्दोलन के लिए बन्द कर दिया। वह भी इस हद तक कि अंग्रेजी के लेखों या पत्रों में भी बहुत बार 'पैसिव रेजिस्टेन्स' शब्द का उपयोग न करके मैंने 'सत्याग्रह' शब्द का या किसी दूसरे अंग्रेजी शब्द का उपयोग शुरू कर दिया। इस प्रकार जो वस्तु सत्याग्रह के नाम से पहचानी जाने लगी उस वस्तु का और 'सत्याग्रह' नाम का जन्म हुआ। हमारे इस इतिहास को आगे बढ़ाने से पहले ही 'पैसिव रेजिस्टेन्स' और 'सत्याग्रह' के बीच का भेद समझ लेना आवश्यक है। इसलिए अगले प्रकरण में हम इस भेद को समझ लेंगे।

(दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास से साभार)

'एक पेड़ माँ के नाम'

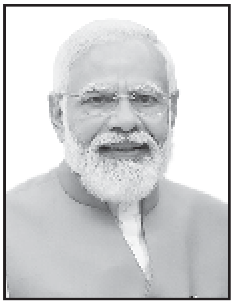

श्री नरेंद्र मोदी

मेरे प्यारे देशवासियों, नमस्कार। आज वो दिन आ ही गया जिसका हम सभी फरवरी से इंतजार कर रहे थे। मैं 'मन की बात' के माध्यम से एक बार फिर आपके बीच, अपने परिवारजनों के बीच आया हूँ। एक बड़ी प्यारी सी उक्ति है – 'इति विदा पुनर्मिलनाय' इसका अर्थ भी उतना ही प्यारा है, मैं विदा लेता हूँ, फिर मिलने के लिए। इसी भाव से मैंने फरवरी में आपसे कहा था कि चुनाव नतीजों के बाद फिर मिलूँगा, और आज, 'मन की बात' के साथ, मैं, आपके बीच फिर हाजिर हूँ। उम्मीद है आप सब अच्छे होंगे, घर में सबका स्वास्थ्य अच्छा होगा और अब तो मानसून भी आ गया है, और जब मानसून आता है, तो मन भी आनंदित हो जाता है। आज से फिर, एक बार, हम, 'मन की बात' में ऐसे देशवासियों की चर्चा करेंगे जो अपने कामों से समाज में, देश में, बदलाव ला रहे हैं। हम चर्चा करेंगे, हमारी, समृद्ध संस्कृति की, गौरवशाली इतिहास की, और, विकसित भारत के प्रयास की।

साथियो, फरवरी से लेकर अब तक, जब भी, महीने का आखिरी रविवार आने को होता था, तब मुझे आपसे इस संवाद की बहुत कमी महसूस होती थी। लेकिन मुझे ये देखकर बहुत अच्छा भी लगा कि इन महीनों में आप लोगों ने मुझे लाखों संदेश भेजे। 'मन की बात' रेडियो प्रोग्राम भले ही कुछ महीने बंद रहा हो, लेकिन, 'मन की बात' का जो Spirit है देश में, समाज में, हर दिन अच्छे काम, निःस्वार्थ भावना से किए गए काम, समाज पर positive असर डालने वाले काम – निरंतर चलते रहे। चुनाव की खबरों के बीच निश्चित रूप से मन को छू जाने वाली ऐसी खबरों पर आपका ध्यान गया होगा।

मेरे प्यारे देशवासियो, आज 30 जून का ये दिन बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस दिन को हमारे आदिवासी भाई-बहन 'हूल दिवस' के रूप में मनाते हैं। यह दिन वीर सिद्धो-कान्हू के अदम्य साहस से जुड़ा है, जिन्होंने विदेशी शासकों के अत्याचार का पुरजोर विरोध किया था। वीर सिद्धो-कान्हू ने हजारों संथाली साथियों को एकजुट करके अंग्रेजों का जी-जान से मुकाबला किया, और जानते हैं ये कब हुआ था? ये हुआ था 1855 में, यानी ये 1857 में भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से भी दो साल पहले हुआ था, तब,

एक बड़ी प्यारी सी उक्ति है – 'इति विदा पुनर्मिलनाय' इसका अर्थ भी उतना ही प्यारा है, मैं विदा लेता हूँ, फिर मिलने के लिए। इसी भाव से मैंने फरवरी में आपसे कहा था कि चुनाव नतीजों के बाद फिर मिलूँगा, और आज, 'मन की बात' के साथ, मैं, आपके बीच फिर हाजिर हूँ। उम्मीद है आप सब अच्छे होंगे, घर में सबका स्वास्थ्य अच्छा होगा और अब तो मानसून भी आ गया है...

झारखंड के संथाल परगना में हमारे आदिवासी भाई-बहनों ने विदेशी शासकों के खिलाफ हथियार उठा लिया था। हमारे संथाली भाई-बहनों पर अंग्रेजों ने बहुत सारे अत्याचार किए थे, उन पर कई तरह के प्रतिबंध भी लगा दिए थे। इस संघर्ष में अद्‌भुत वीरता दिखाते हुए वीर सिद्धो और कान्हू शहीद हो गए। झारखंड की भूमि के इन अमर सपूतों का बलिदान आज भी देशवासियों को प्रेरित करता है। आइये सुनते हैं संथाली भाषा में इन्हें समर्पित एक गीत का अंश –मेरे प्यारे साथियो, अगर मैं आपसे पूछूँ कि दुनिया का सबसे अनमोल रिश्ता कौन सा होता है तो आप जरूर कहेंगे – “माँ”। हम सबके जीवन में ‘माँ’ का दर्जा सबसे ऊँचा होता है। माँ, हर दुख सहकर भी अपने बच्चे का पालन-पोषण करती है। हर माँ, अपने बच्चे पर हर स्नेह लुटाती है। जन्मदात्री माँ का ये प्यार हम सब पर एक कर्ज की तरह होता है, जिसे कोई चुका नहीं सकता। मैं सोच रहा था, हम माँ को कुछ दे तो सकते नहीं, लेकिन, और कुछ कर सकते हैं क्या? इसी सोच में से इस वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस पर एक विशेष अभियान शुरू किया गया है, इस अभियान का नाम है – ‘एक पेड़ माँ के नाम’। मैंने भी एक पेड़ अपनी माँ के नाम लगाया है। मैंने सभी देशवासियों से, दुनिया के सभी देशों के लोगों से ये अपील की है कि अपनी माँ के साथ मिलकर, या उनके नाम पर, एक पेड़ जरूर लगाएं। और मुझे ये देखकर बहुत खुशी है कि माँ की स्मृति में या उनके सम्मान में पेड़ लगाने का अभियान तेजी से आगे बढ़ रहा है। लोग अपनी माँ के साथ या फिर उनकी फोटो के साथ पेड़ लगाने की तस्वीरों को Social Media पर साझा कर रहे हैं। हर कोई अपनी माँ के लिए पेड़ लगा रहा है – चाहे वो अमीर हो या गरीब, चाहे वो कामकाजी महिला हो या गृहिणी। इस अभियान ने सबको माँ के प्रति अपना स्नेह जताने का समान अवसर दिया है। वो अपनी तस्वीरों को #Plant4Mother और #एक_पेड़_मां_के_नाम इसके साथ साझा करके दूसरों को प्रेरित कर रहे हैं।

साथियो, इस अभियान का एक और लाभ होगा। धरती भी माँ के समान हमारा ख्याल रखती है। धरती माँ ही हम सबके जीवन का आधार है, इसलिए हमारा भी कर्तव्य है कि हम धरती माँ का भी ख्याल रखें। माँ के नाम पेड़ लगाने के अभियान से अपनी माँ का सम्मान तो होगा ही होगा, धरती माँ की भी रक्षा होगी। पिछले एक दशक में भारत में सबके प्रयास से वन क्षेत्र का अभूतपूर्व विस्तार हुआ है।

साथियो, इस अभियान का एक और लाभ होगा। धरती भी माँ के समान हमारा ख्याल रखती है। धरती माँ ही हम सबके जीवन का आधार है, इसलिए हमारा भी कर्तव्य है कि हम धरती माँ का भी ख्याल रखें। माँ के नाम पेड़ लगाने के अभियान से अपनी माँ का सम्मान तो होगा ही होगा, धरती माँ की भी रक्षा होगी। पिछले एक दशक में भारत में सबके प्रयास से वन क्षेत्र का अभूतपूर्व विस्तार हुआ है। अमृत महोत्सव के दौरान, देशभर में 60 हजार से ज्यादा अमृत सरोवर भी बनाए गए हैं। अब हमें ऐसे ही माँ के नाम पर पेड़ लगाने के अभियान को गति देनी है।

मेरे प्यारे देशवासियों, देश के अलग-अलग हिस्सों में मॉनसून तेजी से अपना रंग बिखेर रहा है। और बारिश के इस मौसम में सबके घर में जिस चीज की खोज शुरू हो गई है, वो है ‘छाता’। ‘मन की बात’ में आज मैं आपको एक खास तरह के छातों के बारे में बताना चाहता हूँ। ये छाते तैयार होते हैं हमारे केरला में। वैसे तो केरला की संस्कृति में छातों का विशेष महत्व है। छाते, वहाँ कई परंपराओं और विधि-विधान का अहम हिस्सा होते हैं। लेकिन मैं जिस छाते की बात कर रहा हूँ, वो हैं ‘कार्थुम्बी छाते’ और इन्हें तैयार किया जाता है केरला के अट्टापडी में। ये रंग-बिरंगे छाते बहुत शानदार होते हैं। और खासियत ये इन छातों को केरला की हमारी आदिवासी बहनें तैयार करती हैं। आज देशभर में इन छातों की मांग बढ़ रही हैं। इनकी Online बिक्री भी हो रही है। इन छातों को ‘वट्टालक्की सहकारी कृषि सोसाइटी’ की देखरेख में बनाया जाता है। इस सोसाइटी का नेतृत्व हमारी नारीशक्ति के पास है। महिलाओं के नेतृत्व में अट्टापडी के आदिवासी समुदाय ने Entrepreneurship की अद्‌भुत मिसाल पेश की है। इस society ने एक बैंबू-हैंडीक्राफ्ट यूनिट की भी स्थापना की है। अब ये लोग एक Retail outlet और एक पारंपरिक cafe खोलने की तैयारी में भी हैं। इनका मकसद

सिर्फ अपने छाते और अन्य उत्पाद बेचना ही नहीं, बल्कि ये अपनी परंपरा, अपनी संस्कृति से भी दुनिया को परिचित करा रहे हैं। आज कार्थुम्बी छाते केरला के एक छोटे से गाँव से लेकर Multinational कंपनियों तक का सफर पूरा कर रहे हैं। लोकल के लिए वोकल होने का इससे बेहतरीन उदाहरण और क्या होगा?

मेरे प्यारे देशवासियो, अगले महीने इस समय तक Paris Olympic शुरू हो चुके होंगे। मुझे विश्वास है कि आप सब भी Olympic खेलों में भारतीय खिलाड़ियों का उत्साह बढ़ाने का इंतजार कर रहे होंगे। मैं भारतीय दल को Olympic खेलों की बहुत-बहुत शुभकामनाएं देता हूँ। हम सबके मन में Tokyo Olympic की यादें अब भी ताजा हैं। Tokyo में हमारे खिलाड़ियों के प्रदर्शन ने हर भारतीय का दिल जीत लिया था। Tokyo Olympic के बाद से ही हमारे। एथलिटस Paris Olympic की तैयारियों में जी-जान से जुटे हुए थे। सभी खिलाड़ियों को मिला दें, तो इन सबने करीब Nine Hundred-नौ सौ International competition में हिस्सा लिया है। ये काफी बड़ी संख्या है।

साथियो, Paris Olympic में आपको कुछ चीजें पहली बार देखने को मिलेंगी। shooting में हमारे खिलाड़ियों की प्रतिभा निखरकर सामने आ रही है। टेबल टैनिस में मेन और वूमेन दोनों टीमें क्वालीफाइ कर चुकी हैं। भारतीय Shotgun Team में हमारी शूटर बेटियाँ भी शामिल हैं। इस बार कुश्ती और घुड़सवारी में हमारे दल के खिलाड़ी उन Categories में भी compete करेंगे, जिनमें पहले वे कभी शामिल नहीं रहे। इससे आप ये अनुमान लगा सकते हैं कि इस बार हमें खेलों में अलग समअमस का रोमांच नजर आएगा। आपको ध्यान होगा, कुछ महीने पहले World Para Athletics Championship में हमारी Best Performance रही है। वहीं चेस और बेडमिंटन में भी हमारे खिलाड़ियों ने परचम लहराया है। अब पूरा देश ये उम्मीद कर रहा है कि हमारे खिलाड़ी ओलंमपिक में भी बेहतरीन प्रदर्शन करेंगे। इन खेलों में उमकंसे भी जीतेंगे, और देशवासियों का दिल भी जीतेंगे। आने वाले दिनों में, मुझे भारतीय दल से मुलाकात का अवसर भी मिलने वाला है। मैं आपकी तरफ से उनका उत्साहवर्धन करूंगा। और हाँ.. इस बार हमारा Hashtag #CheerþBharat है। इस Hashtag के जरिए हमें अपने खिलाड़ियों को बीममत करना है... उनका उत्साह बढ़ाते रहना है। तो momentum को बनाए रखिए... आपका ये momentum...भारत का magic, दुनिया को दिखाने में मदद करेगा।

मेरे प्यारे देशवासियो, मैं आप सभी के लिए एक छोटी सी audio clip play कर रहा हूँ।

इस रेडियो कार्यक्रम को सुनकर आप भी हैरत में पड़ गए ना ! तो आइए, आपको इसके पीछे की पूरी बात बताते हैं। दरअसल ये कुवैत रेडियो के एक प्रसारण की clip है। अब आप सोचेंगे कि बात हो रही है कुवैत की, तो वहाँ, हिन्दी कहाँ से आ गई ? दरअसल, कुवैत सरकार ने अपने National Radio पर एक विशेष कार्यक्रम शुरू किया है। और वो भी हिन्दी में। 'कुवैत रेडियो' पर हर रविवार को इसका प्रसारण आधे घंटे के लिए किया जाता है। इसमें भारतीय संस्कृति के अलग-अलग रंग शामिल होते हैं। हमारी फिल्में और कला जगत से जुड़ी चर्चाएं वहाँ भारतीय समुदाय के बीच बहुत लोकप्रिय हैं। मुझे तो यहाँ तक बताया गया है कि कुवैत के स्थानीय लोग भी इसमें खूब दिलचस्पी ले रहे हैं। मैं कुवैत की सरकार और वहाँ के लोगों का हृदय से धन्यवाद करता हूँ, जिन्होंने ये शानदार पहल की है।

> ***अब पूरा देश ये उम्मीद कर रहा है कि हमारे खिलाड़ी ओलंमपिक में भी बेहतरीन प्रदर्शन करेंगे। इन खेलों में उमकंसे भी जीतेंगे, और देशवासियों का दिल भी जीतेंगे। आने वाले दिनों में, मुझे भारतीय दल से मुलाकात का अवसर भी मिलने वाला है। मैं आपकी तरफ से उनका उत्साहवर्धन करूंगा। और हाँ.. इस बार हमारा Hashtag #Cheerþ Bharat है। इस Hashtag के जरिए हमें अपने खिलाड़ियों को cheer करना है...***

साथियो, आज दुनियाभर में हमारी संस्कृति का जिस तरह गौरवगान हो रहा है, उससे किस भारतीय को खुशी नहीं होगी ! अब जैसे, तुर्कमेनिस्तान में इस साल मई में वहाँ के राष्ट्रीय कवि की 300वीं जन्म-जयंती मनाई गई। इस अवसर पर तुर्कमेनिस्तान के राष्ट्रपति ने दुनिया के 24

प्रसिद्ध कवियों की प्रतिमाओं का अनावरण किया। इनमें से एक प्रतिमा गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर जी की भी है। ये गुरुदेव का सम्मान है, भारत का सम्मान है। इसी तरह जून के महीने में दो कैरेबियाई देश सूरीनाम और Saint Vincent and the Grenadines ने अपने Indian Heritage को पूरे जोश और उत्साह के साथ celebrate किया। सूरीनाम में हिन्दुस्तानी समुदाय हर साल 5 जून को Indian Arrival Day और प्रवासी दिन के रूप में मनाता है। यहाँ तो हिन्दी के साथ ही भोजपुरी भी खूब बोली जाती है। Saint Vincent and the Grenadines में रहने वाले हमारे भारतीय मूल के भाई-बहनों की संख्या भी करीब छः हजार है। उन सबको अपनी विरासत पर बहुत गर्व है। एक जून को इन सबने Indian Arrival Day को जिस धूम-धाम से मनाया, उससे उनकी ये भावना साफ झलकती है। दुनियाभर में भारतीय विरासत और संस्कृति का जब ऐसा विस्तार दिखता है तो हर भारतीय को गर्व होता है।

यहाँ भी 21 जून को शानदार Yoga Session का आयोजन हुआ। बहरीन में दिव्यांग बच्चों के लिए एक Special Camp का आयोजन किया गया। श्रीलंका में UNESCO heritage site के लिए मशहूर गॉल फोर्ट में भी एक यादगार Yoga Session हुआ। अमेरिका के New York में Observation Deck पर भी लोगों ने योग किया। Marshal Islands पर भी पहली बार बड़े स्तर पर हुए योग दिवस के कार्यक्रम में यहाँ के राष्ट्रपति जी ने भी हिस्सा लिया। भूटान के थिंपू में भी एक बड़ा योग दिवस का कार्यक्रम हुआ...

साथियो, इस महीने पूरी दुनिया ने 10वें योग दिवस को भरपूर उत्साह और उमंग के साथ मनाया है। मैं भी जम्मू-कश्मीर के श्रीनगर में आयोजित योग कार्यक्रम में शामिल हुआ था। कश्मीर में युवाओं के साथ-साथ बहनों-बेटियों ने भी योग दिवस में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। जैसे-जैसे योग दिवस का आयोजन आगे बढ़ रहा है, नए-नए records बन रहे हैं। दुनिया-भर में योग दिवस ने कई शानदार उपलब्धियां हासिल की हैं। सऊदी अरब में पहली बार एक महिला अल हनौफ साद जी ने common yoga protocol को lead किया। ये पहली बार है जब किसी सऊदी महिला ने किसी main yoga session को instruct किया हो। Egypt में इस बार योग दिवस पर एक photo competition का आयोजन किया गया। नील नदी के किनारे Red Sea के beaches पर और पिरामिडों के सामने-योग करते, लाखों लोगों की तस्वीरें बहुत लोकप्रिय हुई। अपने Marble Buddha Statue के लिए प्रसिद्ध Myanmar का माराविजया पैगोडा कॉम्प्लेक्स दुनिया में मशहूर है। यहाँ भी 21 जून को शानदार Yoga Session का आयोजन हुआ। बहरीन में दिव्यांग बच्चों के लिए एक Special Camp का आयोजन किया गया। श्रीलंका में UNESCO heritage site के लिए मशहूर गॉल फोर्ट में भी एक यादगार Yoga Session हुआ। अमेरिका के New York में Observation Deck पर भी लोगों ने योग किया। Marshal Islands पर भी पहली बार बड़े स्तर पर हुए योग दिवस के कार्यक्रम में यहाँ के राष्ट्रपति जी ने भी हिस्सा लिया। भूटान के थिंपू में भी एक बड़ा योग दिवस का कार्यक्रम हुआ, जिसमें मेरे मित्र प्रधानमंत्री टोबगे भी शामिल हुए। यानी दुनिया के कोने-कोने में योग करते लोगों के विहंगम दृश्य हम सबने देखे। मैं योग दिवस में हिस्सा लेने वाले सभी साथियों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। मेरा आपसे एक पुराना आग्रह भी रहा है। हमें योग को केवल एक दिन का अभ्यास नहीं बनाना है। आप नियमित रूप से योग करें। इससे आप अपने जीवन में सकारात्मक बदलावों को जरूर महसूस करेंगे।

साथियो, भारत के कितने ही products हैं जिनकी दुनिया-भर में बहुत demand है और जब हम भारत के किसी local product को global होते देखते हैं, तो गर्व से भर जाना स्वाभाविक है। ऐसा ही एक product है Araku coffee. Araku coffee आंध्र प्रदेश के अल्लुरी सीता राम राजू जिले में बड़ी मात्रा में पैदा होती है। ये अपने rich flavor और aroma के लिए जानी जाती है। Araku coffee की खेती से करीब डेढ़ लाख आदिवासी परिवार जुड़े हुए हैं। Araku coffee को नई ऊंचाई देने में Girijan cooperative की बहुत बड़ी भूमिका रही है। इसने यहाँ के किसान भाई बहनों को एक साथ लाने का काम किया और

उन्हें Araku coffee की खेती के लिए प्रोत्साहन दिया। इससे इन किसानों की कमाई भी बहुत बढ़ गई है। इसका बहुत लाभ कोंडा डोरा आदिवासी समुदाय को भी मिला है। कमाई के साथ साथ उन्हें सम्मान का जीवन भी मिल रहा है। मुझे याद है एक बार विशाखापत्नम में आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू गारु के साथ मुझे इस coffee का स्वाद लेने का मौका मिला था। इसके taste की तो पूछिए ही मत ! कमाल की होती है ये coffee ! Araku coffee को कई Global awards मिले हैं। दिल्ली में हुई G-20 समिट में भी coffee छाई हुई थी। आपको जब भी अवसर मिले, आप भी Araku coffee का आनंद जरूर लें।

साथियो, Local products को Global बनाने में हमारे जम्मू- कश्मीर के लोग भी पीछे नहीं हैं। पिछले महीने जम्मू-कश्मीर ने जो कर दिखाया है, वो देशभर के लोगों के लिए भी एक मिसाल है। यहाँ के पुलवामा से snow peas की पहली खेप लंदन भेजी गई। कुछ लोगों को ये idea सूझा कि कश्मीर में उगने वाली exotic vegetables को क्यूँ ना दुनिया के नक्शे पर लाया जाए.. बस फिर क्या था... चकूरा गावं के अब्दुल राशीद मीर जी इसके लिए सबसे पहले आगे आए। उन्होंने गावं के अन्य किसानों की जमीन को एक साथ मिलाकर snow peas उगाने का काम शुरू किया और देखते ही देखते snow peas कश्मीर से लंदन तक पहुँचने लगी। इस सफलता ने जम्मू-कश्मीर के लोगों की समृद्धि के लिए नए द्वार खोले हैं। हमारे देश में ऐसे unique products की कमी नहीं है। आप ऐसे products को #myproductsmypride के साथ जरूर share करें। मैं इस विषय पर आने वाले 'मन की बात' में भी चर्चा करूँगा।

मम प्रिया: देशवासिन:

अद्य अहं किञ्चित् चर्चा संस्कृत भाषायां आरभे।

आप सोच रहे होंगे कि 'मन की बात' में अचानक संस्कृत में क्यों बोल रहा हूँ? इसकी वजह है, आज संस्कृत से जुड़ा एक खास अवसर ! आज 30 जून को आकाशवाणी का संस्कृत बुलेटिन अपने प्रसारण के 50 साल पूरे कर रहा है। 50 वर्षों से लगातार इस बुलेटिन ने कितने ही लोगों को संस्कृत से जोड़े रखा है। मैं All India Radio परिवार को बधाई देता हूँ।

साथियो, संस्कृत की प्राचीन भारतीय ज्ञान और विज्ञान की प्रगति में बड़ी भूमिका रही है। आज के समय की मांग है कि हम संस्कृत को सम्मान भी दें, और उसे अपने दैनिक जीवन से भी जोड़ें। आजकल ऐसा ही एक प्रयास बेंगलुरू में कई और लोग कर रहे हैं। बेंगलुरू में एक पार्क है- कब्बन पार्क ! इस पार्क में यहाँ के लोगों ने एक नई परंपरा शुरू की है। यहाँ हफ्ते में एक दिन, हर रविवार बच्चे, युवा और बुजुर्ग आपस में संस्कृत में बात करते हैं। इतना ही नहीं, यहाँ वाद- विवाद के कई session भी संस्कृत में ही आयोजित किए जाते हैं। इनकी इस पहल का नाम है - संस्कृत weekend ! इसकी शुरुआत एक website के जरिए समष्टि गुब्बी जी ने की है। कुछ दिनों पहले ही शुरू हुआ ये प्रयास बेंगलुरूवासियों के बीच देखते ही देखते काफी लोकप्रिय हो गया है। अगर हम सब इस तरह के प्रयास से जुड़ें तो हमें विश्व की इतनी प्राचीन और वैज्ञानिक भाषा से बहुत कुछ सीखने को मिलेगा।

मेरे प्यारे देशवासियो, 'मन की बात' के इस मंच आपसे जुड़ना बहुत अच्छा रहा। अब ये सिलसिला फिर से पहले की तरह चलता रहेगा। अब से एक सप्ताह बाद पवित्र रथ यात्रा की शुरुआत होने जा रही है। मेरी कामना है कि महाप्रभु जगन्नाथ की कृपा सभी देशवासियों पर सदैव बनी रहे। अमरनाथ यात्रा भी शुरू हो चुकी है, और अगले कुछ दिनों में पंढरपुर वारी भी शुरू होने वाली है। मैं इन यात्राओं में शामिल होने वाले सभी श्रद्धालुओं को शुभकामनाएं देता हूँ। आगे कच्छी नववर्ष - आषाढी बीज का त्योहार भी है। इन सभी पर्व-त्योहारों के लिए भी आप सभी को ढेर सारी शुभकामनाएं। मुझे विश्वास है कि Positivity से जुड़े जनभागीदारी के ऐसे प्रयासों को आप मेरे साथ अवश्य Share करते रहें। मैं अगले महीने आपके साथ फिर से जुडने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। तब तक आप अपना भी अपने परिवार का ध्यान रखिए। बहुत-बहुत धन्यवाद। नमस्कार।

पवित्र योद्धा

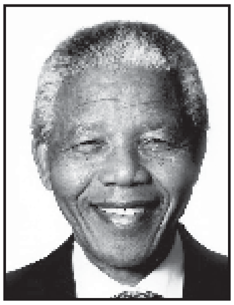

नेल्सन मंडेला

भारत गांधी की जन्मस्थली है, जबकि दक्षिण अफ्रीका उनकी प्रथम कर्मभूमि। वह भारत और दक्षिण अफ्रीका दोनों ही जगहों से संबद्ध रहे। दोनों देशों ने उनकी बौद्धिक और नैतिक प्रतिभा को निखारने में योगदान दिया और बदले में उन्होंने दोनों ही औपनिवेशिक रंगमंच पर मुक्ति आंदोलनों की पटकथा लिखी।

वह औपनिवेशिक सत्ता को चुनौती देने वाले एक आदर्श क्रांतिकारी हैं। उनकी असहयोग की रणनीति, उनका यह दावा कि हम पर कोई तभी हावी हो सकता है जब हम उसे हावी होने में सहयोग प्रदान करें और उनके अहिंसक प्रतिरोध की संकल्पना ने हमारी सदी में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उपनिवेशवाद विरोधी और नस्लवाद विरोधी आंदोलनों को प्रेरित किया।

गांधी और मुझे दोनों को ही औपनिवेशिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ा, और हम दोनों ने हमारी स्वतंत्रता का उल्लंघन करने वाली सरकारों के खिलाफ अपने-अपने देश के लोगों को लामबंद किया।

1960 के दशक तक अफ्रीकी महाद्वीप में चल रहे तमाम स्वतंत्रता संग्रामों पर गांधीवादी विचारों का प्रभाव रहा। इसकी एक बड़ी वजह गांधी के विचारों में निहित वे शक्तियां थीं जो निर्बल को भी लड़ने का बल प्रदान करती थी। अहिंसा सभी प्रमुख अफ्रीकी गठबंधनों का आधिकारिक रुख था, और दक्षिण अफ्रीकी कांग्रेस पार्टी अपने जन्म से लेकर अधिकांश समय तक अहिंसा की पुजारी और हिंसा की कट्टर विरोधी रही।

गांधी अहिंसा को लेकर आजीवन प्रतिबद्ध रहे। जहां तक मुझसे बन पड़ा मैंने भी अहिंसा पर आधारित इस गांधीवादी रणनीति का पालन किया, लेकिन फिर हमारे संघर्ष में एक बिन्दु ऐसा आया जब उत्पीड़क की क्रूर शक्ति का मुकाबला केवल अहिंसक प्रतिरोध के माध्यम से नहीं किया जा सकता था। यह वही बिन्दु था जब हमने 'उमखोंतो वे सिजवे' की स्थापना की और अपने संघर्ष में एक सैन्य आयाम जोड़ा। फिर भी भविष्य के नस्लीय संबंधों को ध्यान में रखते हुए हमने सिर्फ तोड़फोड़ को चुना और किसी को बेवजह जान से न मारने की रणनीति अपनायी। 1962 में पूर्वी और मध्य अफ्रीका के पैन-अफ्रीकी स्वतंत्रता आंदोलन (पीएएफएमईसीए) में मेरे संबोधन के बाद उग्रवादी कार्रवाई आधिकारिक

गांधी और मुझे दोनों को ही औपनिवेशिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ा, और हम दोनों ने हमारी स्वतंत्रता का उल्लंघन करने वाली सरकारों के खिलाफ अपने-अपने देश के लोगों को लामबंद किया।

1960 के दशक तक अफ्रीकी महाद्वीप में चल रहे तमाम स्वतंत्रता संग्रामों पर गांधीवादी विचारों का प्रभाव रहा। इसकी एक बड़ी वजह गांधी के विचारों में निहित वे शक्तियां थीं जो निर्बल को भी लड़ने का बल प्रदान करती थी।

तौर पर अफ्रीकी एकता संगठन (ऑर्गनाइजेशन ऑफ अफ्रीकन यूनिटी) द्वारा समर्थित अफ्रीकी एजेंडे का हिस्सा बन गई, जिसमें मैंने कहा था, 'शक्ति की भाषा ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसे साम्राज्यवादी सुन सकते हैं। कोई भी देश हिंसा को किसी-न-किसी रूप में अपनाये बिना कभी आजाद नहीं हुआ है।'

दरअसल, गांधीजी ने भी स्वयं कभी भी हिंसा को पूर्णतया खारिज नहीं किया। उन्होंने भी विशिष्ट परिस्थितियों में हथियारों की आवश्यकता को स्वीकार किया। उन्होंने कहा है, 'यदि कायरता और हिंसा के बीच चयन करना हो, तो मैं हिंसा को चुनने की सलाह दूंगा... मैं अपमान सहते रहने के बजाय सम्मान की रक्षा के लिए हथियारों का इस्तेमाल करना पसंद करूंगा...'

हिंसा और अहिंसा सर्वथा भिन्न नहीं हैं; बल्कि किसी आंदोलन में दोनों में से किस तत्व की प्रबलता है यह उस आंदोलन की प्रकृति निर्धारित करती है।

गांधी 1893 में 23 वर्ष की उम्र में दक्षिण अफ्रीका पहुंचे। एक सप्ताह के भीतर ही उनका सामना नस्लवाद से हुआ। उनकी तत्काल प्रतिक्रिया इस देश को छोड़कर चले जाने की थी जहां रंग को लेकर इतना अपमानित होना पड़ता था, लेकिन फिर उनके आंतरिक लचीलेपन ने उन्हें मिशन की भावना से अभिभूत कर दिया। वे नस्लीय रूप से शोषितों की गरिमा की रक्षा, औपनिवेशिक गुलामी की जंजीरों में जकड़े हुए लोगों की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करने और एक नयी सामाजिक व्यवस्था की रूपरेखा तैयार करने के लिए यहीं रुक गये।

21 साल बाद वह एक महान आत्मा बन कर यहां से चले गए। मेरे मन में इसमें कोई संदेह नहीं है कि दक्षिण अफ्रीका छोड़ने से पहले वे 'महात्मा' बन चुके थे।

गांधी कोई साधारण नेता नहीं थे। ऐसे भी लोग हैं जो मानते हैं कि वह दैवीय रूप से प्रेरित थे, और यह बात सच ही है। उन्होंने ऐसे समय में अहिंसा का उपदेश देने का साहस किया जब हिरोशिमा और नागासाकी की हिंसा हम पर थोप दी गयी; उन्होंने नैतिकता की वकालत तब की जब विज्ञान, प्रौद्योगिकी और पूंजीवादी व्यवस्था ने इसे निरर्थक बना दिया था। उन्होंने स्वयं के महत्व को कम किए बिना स्वहित को सामूहिक हित में बदलने की राह दिखायी। दरअसल, समाज और व्यक्ति की परस्पर निर्भरता उनके दर्शन के केंद्र में है। वह व्यक्ति और समाज दोनों में ही नैतिकता का एक साथ और संवादात्मक विकास चाहते हैं।

उनका सत्याग्रह का दर्शन ईश्वर रूपी सत्य को साकार करने के लिए व्यक्तिगत और सामाजिक संघर्ष दोनों ही है। वह इस सत्य को अकेले, आत्म-केन्द्रित रूप से नहीं, बल्कि बाकी लोगों के साथ खोजने का प्रयास करते हैं। उन्होंने कहा है, 'मैं ईश्वर को खोजना चाहता हूं, और क्योंकि मैं ईश्वर को खोजना चाहता हूं, मुझे अन्य लोगों के साथ ही ईश्वर को खोजना होगा। मेरा यह मानना है कि मैं ईश्वर को अकेले नहीं पा सकता हूँ। अगर मैंने कभी ईश्वर को अकेले खोजने की चेष्टा की होती, तो मैं हिमालय की ओर भाग रहा होता और वहां किसी गुफा में भगवान को ढूंढ रहा होता। लेकिन चूँकि मेरा मानना है कि कोई भी ईश्वर को अकेले नहीं पा सकता, इसलिए मुझे बाकी लोगों के साथ ही इसके लिए प्रयास करना होगा। मुझे उन्हें अपने साथ लेकर चलना होगा।'

वह अपने आंदोलन में धार्मिक और धर्मनिरपेक्षता दोनों को ही समान रूप से साधने में सक्षम रहे। महात्मा गांधी का ब्रिटिश शासन को लेकर मोहभंग सर्वप्रथम बंबाटा विद्रोह के दौरान दक्षिण अफ्रीका के पहाड़ी इलाके में हुआ। वहां वे ब्रिटिश साम्राज्य के वफादार नागरिक व एक देशभक्त के रूप में, साम्राज्य की सेवा के लिए भारतीय स्ट्रेचर-वाहक दल का नेतृत्व करने पहुंचे थे।लेकिन जूलुओं के खिलाफ ब्रिटिश क्रूरता व प्रत्यक्ष हिंसा ने उनकी आत्मा को झकझोर कर रख दिया। उन्होंने उस युद्ध के मैदान में, स्वयं को सभी भौतिक आसक्तियों से मुक्त कर हिंसा को खत्म करने और मानवता की सेवा के लिए खुद को पूरी तरह से समर्पित करने का दृढ़ संकल्प किया। ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा बेरहमी से मारे गये जूलुओं को देखकर वह इतने उद्वेलित हो गये कि उनके मन में ब्रिटिश चीजों को लेकर जो सम्मान एवं प्रशंसा का भाव था वो सहसा खत्म हो गया और वे आजीवन स्वदेशी और नृजातीयता के प्रवर्तक बन गये। उन्होंने न सिर्फ औपनिवेशिक संस्कृति और ब्रिटिश प्रभुत्व के विरुद्ध भारतीय स्वत्व को पुनर्जीवित किया बल्कि भारतीय

हस्तशिल्प के पुनरुत्थान को औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध एक आर्थिक हथियार में तब्दील कर दिया। इसी क्रम में औपनिवेशिक उत्पादों का बहिष्कार देशी कामगारों को उनकी खोयी हुई पूंजी व कौशल को पुनर्स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण जरिया बना।

आज वैश्विक स्तर पर मौजूद गरीबी, विशेष रूप से अफ्रीकी महाद्वीप में गरीबी, की एक मुख्य वजह विनिर्मित वस्तुओं के लिए विदेशी बाजारों पर निरंतर निर्भरता है। यह जहां एक तरफ विदेशी ऋणों में असहनीय वृद्धि करता है, वहीं दूसरी तरफ घरेलू उत्पादन को कमजोर करने के साथ ही घरेलू कौशल को भी नुकसान पहुंचाता है। ऐसे में आत्मनिर्भरता को लेकर गांधी का आग्रह एक बुनियादी आर्थिक सिद्धांत है, जिसका अगर आज भी पालन किया जाये तो यह तीसरी दुनिया की गरीबी को कम करने और विकास को प्रोत्साहित करने का महत्वपूर्ण उपाय हो सकता है।

गांधीजी फ्रांत्ज फैनन और दक्षिण अफ्रीका और अमेरिका में अश्वेत–चेतना आंदोलनों के शुरू होने से आधी सदी से भी पहले स्वदेशी ज्ञान, आत्मा और उद्यम के पुनरुत्थान के लिए प्रेरित करते रहे थे।

महात्मा गांधी ने एडम स्मिथ द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत, जिसके अनुसार मनुष्य अपने कर्मों में सदैव स्वार्थ व पाशविक जरूरतों से उत्प्रेरित रहता है, को सिरे से खारिज किया और अहिंसा, न्याय और समानता के सिद्धांतों का अनुपालन करते हुए अध्यात्म की तरफ लौटने का मार्ग प्रशस्त किया।

वह इस मृग–मरीचिका को भी उजागर करते हैं जिसके अनुसार प्रत्येक इंसान अमीर और सफल हो सकता है बशर्ते कि वह कड़ी मेहनत करे। वह उन लाखों लोगों की ओर इशारा करते हैं जो हाड़तोड़ मेहनत करने के बावजूद भूखे रहने के लिए अभिशप्त हैं। दरअसल वे एक जमींदार का नहीं, बल्कि किसान के जीवन का अनुकरण करने की सलाह देते हैं, क्योंकि 'सभी किसान तो हो सकते हैं, लेकिन केवल कुछ ही लोग जमींदार बन सकते हैं।'

उन्होंने अपने आरामदायक जीवन को त्याग जनता के साथ उनके स्तर पर जुड़कर उनके साथ समानता का भाव स्थापित करने का प्रयास किया। उनका कहना था कि 'मैं चहुंओर आर्थिक समानता लाने की उम्मीद नहीं कर सकता... मुझे खुद को सबसे गरीब लोगों के स्तर तक लाना होगा।'

धन और निर्धनता की उनकी समझ से श्रम और पूंजी की समझ विकसित हुई, जिसने उन्हें 'ट्रस्टीशिप' रूपी समाधान की ओर प्रेरित किया। इस सिद्धांत के अनुसार पूंजी का कोई निजी स्वामित्व नहीं है; यह पुनर्वितरण और समानता के लिए ट्रस्ट में दिया जाता है। इसी प्रकार व्यक्ति में निहित विलक्षण योग्यताओं और प्रतिभाओं की परख करते हुए, उनका मानना था कि ये योग्यताएं व प्रतिभाएं ईश्वर द्वारा मनुष्य को समाज की सामूहिक भलाई के लिए प्रदत्त दैवीय उपहार हैं।

वह पूंजीवाद और साम्यवाद से भिन्न, अहिंसा पर आधारित एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था की संकल्पना करते हैं जिसमें सर्वोदय के तत्व विद्यमान हैं।

वह डार्विन के 'योग्यतम की उत्तरजीविता' (survival of the fittest), एडम स्मिथ की आर्थिक क्षेत्र में 'अहस्तक्षेप की नीति' (laissez-faire) और कार्ल मार्क्स की पूंजी और श्रम के बीच परस्पर विरोध अथवा द्वन्द्व के सिद्धांत को खारिज करते हैं और दोनों के बीच अन्योन्याश्रयता पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

वह हृदय-परिवर्तन की मानवीय क्षमता में असीम विश्वास रखते हुए शोषक के खिलाफ सत्याग्रह की वकालत करते हैं, जिसका उद्देश्य शोषक को नष्ट करना न होकर उसका हृदय-परिवर्तन है, ताकि वह शोषण करना बंद कर दे और शोषितों के साथ सत्य की खोज में शामिल हो जाए।

भले ही हम सीधे तौर पर गांधी से प्रभावित हों या न हों, हमने दक्षिण अफ्रीका में ऐसी ही सोच की बुनियाद पर अपना नया लोकतंत्र अपेक्षाकृत शांति के माहौल में स्थापित करने में कामयाबी हासिल की है।

गांधी आज भी आधुनिक उन्नत औद्योगिक व्यवस्था पर टिकी सामाजिक संरचना के एकमात्र विशद आलोचक हैं। दूसरों ने इस व्यवस्था से जन्मे अधिनायकवाद की आलोचना की है, लेकिन इसके उत्पादन प्रणाली में मौजूद मूलभूत खामियों की नहीं। गांधी विज्ञान और प्रौद्योगिकी के खिलाफ नहीं हैं, लेकिन वह प्रत्येक व्यक्ति के काम करने के अधिकार को प्राथमिकता देते हैं जिसे मशीनीकरण की प्रक्रिया धीरे-धीरे छीन लेती है। उनका मानना है कि बड़े पैमाने पर मशीनीकरण एक आदमी के हाथों में धन केंद्रित करती है जो कालांतर में बाकी लोगों पर अत्याचार करना शुरू कर देता है। गांधी छोटी मशीनों के पक्षधर हैं क्योंकि इससे व्यक्ति का अपने उपकरणों पर नियंत्रण बना रहता है और दोनों के बीच एक नैसर्गिक लगाव पनपता है, जैसे कि एक क्रिकेटर का अपने बल्ले से या कृष्ण का अपनी बांसुरी से। दूसरे शब्दों में वह व्यक्ति का मशीनों से अलगाव को खत्म करना चाहते हैं जिससे कि उत्पादन प्रणाली में नैतिकता बहाल की जा सके।

जैसा कि हम अक्सर बेरोजगारी की समस्या से ग्रस्त अर्थव्यवस्थाओं में पाते हैं, ऐसे समाजों में जहां एक तरफ एक छोटा सा वर्ग समस्त संसाधनों का उपभोग करता है वहीं दूसरी तरफ जनसंसख्या का एक बड़ा हिस्सा भूखों मरती है। ऐसे में हम स्वयं को वैश्वीकरण के औचित्य पर पुनर्विचार करने और गांधीवादी विकल्प पर मंथन करने के लिए मजबूर पाते हैं।

जिस समय फ्रायड उन्मुक्त सेक्स की बात कर रहे थे, गांधी उस पर लगाम लगा रहे थे; जब मार्क्स मजदूरों को पूंजीपतियों के खिलाफ खड़ा कर रहे थे, गांधी उनमें मेल-मिलाप करा रहे थे; जब प्रभावशाली यूरोपीय विचारधारा सामाजिक चिंतन से ईश्वर और आत्मा पर आधारित विमर्श को दरकिनार कर रही थी, तो गांधी समाज में ईश्वर और आत्मा पर केंद्रित विमर्श की पुनर्स्थापना कर रहे थे; एक ऐसे समय में जब गुलामी की जंजीरों में जकड़े औपनिवेशिक जनों ने सोचना लगभग बंद कर दिया था और सभी चीजों से उनका नियंत्रण खत्म हो चुका था, गांधी ने उन्हें पुनः सोचने और चीजों का नियंत्रण अपने हाथों में लेने का साहस दिया; और जब स्वदेशी विचारधाराएँ वस्तुतः लुप्त हो चुकी थीं, तो गांधी ने न सिर्फ उन्हें पुनर्जीवित किया बल्कि उन्हें एक ऐसी शक्ति में बदल दिया जिसने मुक्ति की राह प्रशस्त की।

टाइम मैगजीन, 31 दिसम्बर 1999

(अनुवाद: **सौरव कुमार राय**, शोध अधिकारी, गांधी स्मृति एंव दर्शन समिति)

•

वैश्विक संदर्भ में गांधी और नेल्सन मंडेला की प्रासंगिकता

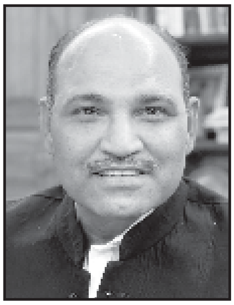

प्रो. गजेन्द्र सिंह

मोहनदास करमचंद गांधी और नेल्सन रोलीहलाहला मंडेला यद्यपि अलग-अलग समय, स्थान और महाद्वीपों का प्रतिनिधित्व करते थे लेकिन दोनों का उद्देश्य एक ही था। इन दोनों ने भेदभाव रूपी संकट से जकड़ी मानवता को मुक्त करने में मसीहा के रूप में प्रतिनिधित्व किया। गांधी की तुलना में नेल्सन मंडेला को रंगभेद शासन के अपराधियों के हाथों लंबी जेल की सजा काटनी पड़ी। त्वचा के रंग के आधार पर लोगों के साथ होने वाले भेदभाव से गांधी जी परिचित थे। गांधी जी को इस बात का एहसास था कि न केवल राजनीतिक बल्कि आर्थिक और सामाजिक रूप से भी भेदभाव के चक्र को खत्म करना कितना कठिन है। उनके विचार और सूत्रीकरण दक्षिण अफ्रीका में उनके इलाज से निकले। दक्षिण अफ्रीका भेदभाव के प्रतिरोध का जन्मस्थान था और भारत ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ शांतिपूर्ण प्रतिरोध का अभ्यास किया। नेल्सन मंडेला ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद शासन का विरोध करने के एक प्रभावी साधन के रूप में अहिंसा और गैर निगम और सविनय अवज्ञा की विचारधारा को अपनाया था। गांधी और मंडेला के नेतृत्व में, सत्याग्रह सत्तावाद के खिलाफ अहिंसक असहमति का एक वैश्विक साधन और शक्तिशाली के खिलाफ शक्तिहीन का एक व्यावहारिक उपकरण बन गया। इस प्रकार, गांधी और मंडेला दोनों में एक परिवर्तनकारी और मुक्तिदायक पद्धति के रूप में विश्व स्तर पर सत्याग्रह का आह्वान करने की क्षमता थी। वैश्वीकरण के दिनों में, जो विभिन्न राज्यों के बीच आर्थिक एकता को बढ़ावा देने का प्रयास करता है, प्रगतिशील बहुलवाद की अवधारणा जो लोकतंत्र, बहुलवादी समाज, मानवाधिकार और लैंगिक समानता को बनाए रखने का प्रयास करती है, अधिक आकर्षक है। यह सार्वभौमिक मानवतावाद पर विश्वास करने से आता है। मंडेला और गांधी सार्वभौमिक मानवतावाद के सच्चे विश्वासी थे। मंडेला की टीआरसी और गांधी जी का अहिंसा का सिद्धांत संपूर्ण मानवता के लिए शांति और सद्भाव के निर्माण के साधन हैं।

'मोहनदास कर्मचन्द्र गांधी' और नेल्सन रोलीहलाहला मंडेला दोनों ने अपने राजनीतिक कैरियर की शुरुआत बैरिस्टर बनकर की और नस्लीय भेदभाव, नफरत, असमानता और रंगभेद के खिलाफ आवाज उठाई। गांधी और मंडेला दोनों समानता की मूल अवधारणा में विश्वास करते थे जिसमें विभिन्न धर्म, पंथ, रंग और जातीयता आदि वाले पुरुषों और महिलाओं की

दक्षिण अफ्रीका भेदभाव के प्रतिरोध का जन्मस्थान था और भारत ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ शांतिपूर्ण प्रतिरोध का अभ्यास किया। नेल्सन मंडेला ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद शासन का विरोध करने के एक प्रभावी साधन के रूप में अहिंसा और गैर निगम और सविनय अवज्ञा की विचारधारा को अपनाया था। गांधी और मंडेला के नेतृत्व में, सत्याग्रह सत्तावाद के खिलाफ अहिंसक असहमति...

समान स्थिति शामिल थी। लोगों के लिए बुनियादी नागरिक और राजनीतिक अधिकार, महात्मा गांधी और नेल्सल मंडेला के विचार धाराओं के राजनीतिक आदर्श है। गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में नस्लीय भेदभाव के खिलाफ खड़े हुए और लोगों के नागरिक अधिकारों के लिए सत्याग्रह का इस्तेमाल किया। मंडेला ने गांधीवादी विचार का समर्थन किया था और रंगभेद व्यवस्था के खिलाफ अपना आंदोलन चलाया था। स्वतंत्र भारत के संविधान में गांधीवादी दर्शन परिलक्षित होता है। 1994 के दक्षिण अफ्रीकी संविधान ने मंडेला की समानता, न्याय, बंधुत्व अहिंसा और सत्य और सुलह की विचारधारा के सिद्धांत को प्रतिबिंबित किया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

नस्लीय भेदभाव का इतिहास रोमन साम्राज्य के काल से ही अनुभव किया जाता रहा है। रोमन साम्राज्य ने दासों और स्वतंत्र लोगों के बीच अंतर देखा और दासों के लिए चेतावनी और उचित दंड को लागू किया और यह सामान्य लोगों की तर्क शक्ति पर विश्वास नहीं करता था प्लेटो का कहना है कि 'मजबूरी में सीखी गई कोई भी चीज किसी काम की नहीं होती है वे कहते है कि गुलामी शक्ति, धन, शिक्षा और विशेष जातीयता की श्रेष्ठता और हीनता पर आधारित है'' प्लेटो ने दासों और स्वतंत्र लोगों के बीच अंतर को चिन्हित किया, जब वे गलत करे उनका मानना है कि एक चेतावनी अपर्याप्त है, उचित सजा जरूरी है। (प्लेटो)

अरस्तू ने इस बात पर जोर दिया कि सभी गुलाम निम्नतर होते हैं और यही समाज और दुनिया में नस्लीय भेदभाव की शुरुआत थी। अरस्तू का मानना था कि यदि किसी व्यक्ति के जीवन पर दूसरों की आज्ञाओं का प्रभुत्व है तो वह स्वाभाविक रूप से गुलाम होने का हकदार है। (अरस्तु)।

अब्राहम लिंकन 1861 में संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति बने और रंग की परवाह किए बिना नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के सच्चे समर्थक हैं। वह उस समय राष्ट्रपति बने जब अमेरिका संभावित गृहयुद्ध और गुलामी के कगार पर था। लिंकन का दृढ़ विश्वास था कि अमेरिकी लोकतंत्र का अर्थ समान अधिकार और समान अवसर और दृढ़ता से है।

वे बुनियादी प्राकृतिक नागरिक और राजनीतिक अधिकारों जैसे गुलामी से मुक्ति और वोट देने का अधिकार आदि में विश्वास करते थे। वह चाहते थे कि गुलामों को समाज में समान अवसर प्रदान करके उनकी मुक्ति सरकार की प्रमुख चिंता होनी चाहिए और उनका दृढ़ विश्वास था कि गुलामी एक महान बुराई थी। (लिंकन)

'वह गुलामी को तुरंत गैरकानूनी घोषित करना चाहते थे। लिंकन ने दासों को सरकारी सहायता प्रदान करने के विचार का भी समर्थन किया, जिससे वे समाज में अपनी आजीविका स्थापित कर सकें' (लिंकन)

शरीर के रंग की परवाह किए बिना सभी के लिए समानता की शुरुआत की गई। 13वें संशोधन में दास मालिकों को मुआवजा दिए बिना सभी राज्यों और क्षेत्रों में दासता को तुरंत समाप्त करने का आह्वान किया गया (जिएनएप, विलियम, 2002) और इसका श्रेय लिंकन को जाता है।

मार्टिन लूथर किंग जूनियर बीसवीं सदी के सबसे प्रसिद्ध अधिवक्ताओं में से एक थे जिनका जन्म अटलांटा, जॉर्जिया में हुआ था। मार्टिन लूथरा किंग जूनियर ने अमेरिका में अधिक समानता लाने और सभी लोगों के लिए नागरिक अधिकार सुनिश्चित करने के लिए कड़ी मेहनत की। मार्टिन लूथर किंग अहिंसक विरोध प्रदर्शन और सभी के नागरिक अधिकारों का सम्मान करते है। ''वह सार्वजनिक परिवहन, रोजगार, मतदान और शिक्षा सहित कई क्षेत्रें में नस्लीय भेदभाव को खत्म करना चाहते थे। इस दौरान अहिंसक विरोध प्रदर्शन और सविनय अवज्ञा ने कई संकट पैदा किए और सरकार को हस्तक्षेप करने के लिए मजबूर किया। किंग ने नागरिक अधिकार आंदोलन, गरिमा, सम्मान, स्वतंत्रता, और समानता' की वकालत की, (मर्टिन लूथर किंग जूनियर)।

घाना के पहले अफ्रीकी मूल के प्रधान मंत्री, क्वामें नक्रूमा एक प्रमुख पैन-अफ्रीकी संगठनकर्ता थे, जिनकी साहसिक नेतृत्व में घाना को 1957 में स्वतंत्रता दिलाने में मदद की। 1945 में नक्रूमा ने पैन-अफ्रीकी आंदोलन में एक केंद्रीय भूमिका निभाई। वे अफ्रीकनिस्ट कांग्रेस और यूनाइटेड गोल्ड कोस्ट कन्वेंशन के महासचिव के रूप में कार्य किया, जो ब्रिटिश उपनिवेश से स्वतंत्रता का प्रयास करने वाला संगठन था।

गांधी राजनीतिक दर्शन मानव सामाजिक संगठन का अध्ययन है और यह समाज में लोगों की प्रकृति से संबंधित है। गांधी का राजनीतिक दर्शन एक व्यवस्था निर्माता को देखता है। उन्होंने अपने राजनीतिक दर्शन को व्यवस्थित किया और उनके सभी उपदेश और लेखन उनकी गहरी भावनाओं और सत्य की ईमानदार अनुभूति से प्रवाहित होती थी। उनके भाषण और लेखन विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रख कर लिपिबद्ध थी। उन्होंने अपनी आत्मकथा को 'सत्य के प्रयोग' का नाम दिया। ''गांधी जी ने समय-समय पर अपनी राय को संशोधित किया था, हालांकि उनका वैचारिक ढ़ांचा वहीं रहा। उन्होंने अपनी मूल बातें नहीं बदलीं। गांधी ने कभी भी एक मूल विचारक के रूप में दावा नहीं किया, उनके राजनीतिक दर्शन की जड़े पूर्वी और पश्चिमी दोनों की विभिन्न दार्शनिक प्रणालियों से प्रभावित थी।'' (जी. एन. धवन, 1948)

गांधी जी के अहिंसा दर्शन की प्रासंगिकता :

गांधी जी को उनके सत्याग्रह अभियानों और भारत को स्वशासन दिलाने के लिए सत्य, प्रेम और अहिंसा के हथियारों के इस्तेमाल के कारण इतिहास में याद किया जाएगा। लेकिन गांधी जी ने कहा कि ''कोई भी तब तक सत्याग्रह करने में सक्षम नहीं है जब तक कि उसे ईश्वर और भागवद गीता पर जीवंत विश्वास न हो, प्रेरणा के लिए वह हमेशा इसकी और रूख करते थे' गीता की नजर में गांधी ने भारत को आजाद कराने और दलित वर्गो को ऊपर उठाने में जो बाहरी काम किया, उसका महत्व एक मामूली सफाईकर्मी के काम से ज्यादा नहीं है, जबकि गांधी जी खुद लगातार दोहराते थे कि कोई भी काम श्रेष्ठ या निम्न नहीं होता। यह ईश्वर की खोज ही थी जिसने गांधी जी के हर कार्य को निर्धारित किया। जब उन्होंने कहा कि सत्य ही ईश्वर है, तो सत्य का अर्थ केवल भौतिक तथ्यों के प्रति समर्पण नहीं था। उसके लिए कहीं अधिक महत्वपूर्ण इनर लाईट के प्रति समर्पण था। (मैरी)।

गांधी जी ने विश्व को अपना कालजयी दर्शन प्रदान किया। यह केवल भारत की आजादी के लिए नहीं था। अहिंसा अपने आप में मानक अवधारणा है और दुनिया की किसी भी स्थिति पर लागू होती है। गांधी जी की अहिंसा ने मनुष्य की गरिमा को रेखांकित किया। इसमें मनुष्य के अद्वितीय गुणों को स्वीकार किया गया और मानवाधिकारों के लिए एक आधार प्रदान किया गया। उन्हें वंचितों और वंचितों के नायक के रूप में जाना जाता था। वह समाज में व्यक्तियों के नागरिक अधिकारों में दृढ़ता से विश्वास करते थे। अहिंसा के दर्शन का उपयोग नागरिक अधिकारों पर जोर देने के लिए एक प्रभावी साधन के रूप में किया गया था। गांधी जी ने असहयोग की वकालत की। गांधी जी की सबसे बड़े उपलब्धि इस तथ्य से निहित है कि उन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन व्यवस्था पर काबू पाने के लिए इस दर्शन का उपयोग किया।

दक्षिण अफ्रीका में पुनर्वितरण के माध्यम से स्वराजः

1994 में दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद शासन की समाप्ति के साथ नवनिर्वाचित सरकार ने भूमि सुधार का एक कार्यक्रम शुरू किया। इसके तीन घटक थे, भूमि पुनर्वितरण, भूमि पुनस्थार्पन और भूमि कार्यकाल सुधार। 1999 के चुनावों के बाद कृषि और भूमि मामलों के एक नए मंत्री ने नई भूमि पुनर्वितरण पर रोक लगाने की घोषणा की और भूमि अधिकार विधेयक का मसौदा पेश किया, जिसने एक व्यापक भूमि कार्यकाल सुधार को वापस लागू किया होगा। एक नई नीति की रूपरेखा तैयार की गई है, यह श्वेत स्वामित्व वाली वाणिज्यिक कृषि भूमि के पुनर्वितरण में तेजी लाना चाहता है, जिसमें 15 प्रतिशत को पांच वर्षो में बदलने का लक्ष्य रखा गया है, लेकिन संचालन के विभिन्न पैमाने के द्वारा अश्वेत वाणिज्यिक किसानों को पुनः आवंटन की दिशा में प्रयास किया जा रहा है।

नब्बे के दशक की शुरुआत में रंगभेद की समाप्ति के साथ, मंडेला सरकार ने भूमि सुधार का एक संक्रिया कार्यक्रम शुरू किया, जो नए कानून में प्रकट हुआ और यह दक्षिण अफ्रीकी भूमि नीति 1997 पर श्वेत पत्र (मंडेला, 2020) है।

संपूर्ण प्राथमिक उद्देश्य भूमि जोत में व्यापक असंतुलन का निवारण करना है जहां एक तिहाई से अधिक आबादी भूमि क्षेत्र के 13 प्रतिशत पर केंद्रित है और असुरक्षित और द्वितीयक तरीकों से भूमि पर कब्जा करती है। इसके विपरीत दक्षिण अफ्रीका की अल्पसंख्यक श्वेत

आबादी के पास सुरक्षित फ्रीहोल्ड प्रकार के शासन में भूमि का विशाल भू भाग है। मोटे तौर पर सुधार कार्यक्रम में तीन भाग शामिल हैं, भूमि के पुनर्वितरण की पहल, नस्लीय भेदभावपूर्ण कानूनों और नीतियों के माध्यम से विनियोजित संपत्ति को बहाल करने के उपाय, और संपत्ति को रखने के तरीके में सुधार के लिए एक कार्यक्रम।

पुनर्वितरण भूमि-पुनर्वितरण कार्यक्रम का उद्देश्य भूमिहीन गरीबों, श्रमिक किरायेदारों, खेत श्रमिकों और उभरते किसानों को उनकी आजीविका और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए आवासीय और उत्पादक उपयोग के लिए भूमि का पुनः आवटन करना है।

दक्षिण अफ्रीका में गांधी और सत्याग्रहः

गांधी जी ने लोगों के बुनियादी नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए सत्याग्रह का इस्तेमाल किया और मंडेला भी सत्याग्रह की तकनीक से प्रभावित थे।

मंडेला ने नस्लीय शासन के खिलाफ लड़ने के लिए सत्याग्रह के सभी तरीकों का इस्तेमाल किया। उनके जीवन दर्शन का मूल ''अंतरआत्मा का सत्य'' है। व्युत्पत्ति के अनुसार सत्य का अर्थ ईश्वर, आत्मिक बल नैतिक कानून से है जो लोगों के लाभ के लिए अंतिम सत्य की ओर ले जाता है। गांधी सत्य को ईश्वर के रूप में में पूजते थे। वह सत्य के दर्शन में विश्वास करते थे जो ईश्वर के बाद था। गांधी जी के अनुसार सत्य हर चीज में श्रेष्ठ है। उनका कहना है कि सत्य के मार्ग पर चलकर व्यक्ति अपने व्यक्तिगत और व्यवसायिक जीवन में शांतिपूर्ण जीवन और संतुष्टि प्राप्त कर सकता है।

महात्मा गांधी और नेल्सन मंडेला दोनों अपने समय के नेता थे। वे अहिंसा, सत्य और न्याय के साथ-साथ संवैधानिक लोकतंत्र और समाज में कानून के शासन में विश्वास करते थे। गांधी जी ने समतामूलक समाज की स्थापना के लिए ''ट्रस्टीशिप सिद्धांत'' अपनाया और मंडेला ने न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिए टीआरसी (Truth and Reconciliation commission / सत्य और सुलह आयोग) की स्थापना की। मंडेला ने समाज में सामाजिक न्याय के लिए दक्षिण अफ्रीका में भूमि वितरण का मार्ग अपनाया। दोनों ने अपने अपने देश के ग्रामीण विकास पर ध्यान केंद्रित किया। शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक गतिविधियां और स्वच्छता गांधी और मंडेला की मुख्य चिंता थी। उन्होंने भारत और दक्षिण अफ्रीका के नागरिको के महत्वपूर्ण अधिकारों की रक्षा के लिए सभी प्रयास किये। वे मानव और सत्य के धर्म में विश्वास करते थे।

संदर्भ ग्रंथः

1. बापू लैटर्स टू मीरा, 1928-48, 1949, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद।
2. कांस्टीटयूशन आफॅ इण्डिया, 1991, लेजिस्लेटिव डिपार्टमेंट, गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया।
3. कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम, 1941, ननजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
4. त्रुथ एंड रिकॉन्सिलिएशन रिपोर्ट, 1994, गवर्नमेंट ऑफ साउथ अफ्रीका।
5. नेल्सन मंडेला ट्रायल्स एंड प्रिसन क्रोनोलॉजी, मंडेला, 2020, नेल्सन मंडेला फांउडेशन, प्रिटोरिया।
6. सत्यागह इन साउथ अफ्रीका, 1954, कैलिफोर्निया एकेडमिक रिप्रिंट्स।
7. स्पीचर्स एंड राइटिंग आफॅ महात्मा गांधी, जी.ए. नातेसन, मद्रास, 1933।
8. एम. के. गांधी, 1958, हिन्द स्वराज और इण्डियन होम रूल, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद।
9. ऑटोबायोग्राफी, 1948, पब्लिक अफेयर्स प्रेस, वॉशिगटन।
10. दिल्ली डायरी, 1948, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
11. मोहन दास के गांधी, 1999, कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी, सीडी - रोम वर्जन (नई दिल्ली : गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया पब्लिकेशन डिवीजन)
12. मीर फातिमा, 1990, हायर दैन होप, द ऑथराइज्ड बायोग्राफी ऑफ नेल्सन मंडेला, मोहन गुरूस्वामी, गांधी एंड मंडेला : लीजेंड्स ऑफ डिफरेंट काइंड, द एशियन एज, दिल्ली।
13. इकोनॉमिक्स ऑफ खादी, 1941, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
14. एन. ऑटोबायोग्राफी और द स्टोरी आफॅ माय एक्सपेरिमेंट्स विथ टुथ, 2003 नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद।

(सह लेखक - मनोज कुमार साहू)

नेल्सन मंडेला, डॉ. आंबेडकर एवं महात्मा गांधी के सत्य की खोज

> *हममें से कुछ ही लोगों के पास इतिहास को मोड़ने की महानता होगी अपने आप में, लेकिन हममें से हर कोई थोड़ा बदलाव लाने के लिए काम कर सकता है...हर बार एक आदमी एक आदर्श के लिए खड़ा होता है, या उसके लिए कार्य करता है कि दूसरों की दशा सुधारें, या अन्याय के विरुद्ध प्रहार करें, वह आशा की एक छोटी सी लहर भेजता है।1*
>
> *–रायेनिती टालजार्ड*

प्रो. कन्हैया त्रिपाठी

समय सापेक्ष प्रकृति न्याय की आग्रही ही नहीं अपितु वह स्वयं न्याय भी करती है। न्याय के मापदंड सत्य पर आधारित होते हैं। न्यायालय के न्याय और प्रकृति के न्याय में इसलिए भिन्नता पाई जाती है। जब कभी कोई गरीब न्यायालय में न्याय नहीं पाता है तो वह प्रकृति की शरण में जाता है। उसका एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि न्यायालय साक्ष्य पर न्याय देने का दावा करते हैं। प्रकृति स्वयं हर समय काल व परिस्थिति की साक्षी होती है और वह उचित समय आने पर न्याय करती है। इसे व्यक्ति बहुत ही सौम्य मन से मानकर शिष्ट भाषा में यह मान लेता है कि यही ईश्वर का न्याय है। चूँकि प्रकृति साक्ष्य या तथ्यों का संकलन व आंकलन नहीं करती वह स्वत: सभी जीवन-धर्म को भरपूर समझती है और उसके आधार पर आंकलन करती है और थोड़ा ठहर कर जब न्याय करती है तो उसे ईश्वर का न्याय कहा जाता है। उसी प्रकृति से उद्‌भूत हमारे बीच व्यक्तित्व भी हैं जो इस प्रकृति से होने वाले न्याय के वकील बनकर आते हैं। डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर, नेल्सन मंडेला व महात्मा गांधी ऐसे ही व्यक्तित्व हैं, जिनके जीवन सामाजिक सहिष्णुता व मानवीय न्यायदर्श को प्रदर्शित करते हैं। वह रायेनिती टालजार्ड मान्यताओं व कथन को अक्षरश: प्रकट करते हुए मिलते हैं।

जीवन-साम्यता है उनमें

जब सामूहिकता में व्यक्ति आधारित विवेचना करते हैं तो प्राय: यह देखा जाता है कि इन सब के जीवन के उभयनिष्ठ पक्ष कौन से हैं और इनके संघर्ष में क्या साम्यता है। नि:संदेह महात्मा गांधी ने ब्लैक होने का दंश सहा। वह अपने दक्षिण अफ्रीका की यात्रा पर थे तो उनके साथ रंगभेद की जो

न्यायालय के न्याय और प्रकृति के न्याय में इसलिए भिन्नता पाई जाती है। जब कभी कोई गरीब न्यायालय में न्याय नहीं पाता है तो वह प्रकृति की शरण में जाता है। उसका एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि न्यायालय साक्ष्य पर न्याय देने का दावा करते हैं।

घटना घटी वह उन्हें अन्दर तक झकझोर डाली थी। गांधी ने निश्चय ही उस दौर में खुद पर बीते पल को महसूस कर अपनी एक रेस और रेसिज्म को लेकर समझ बनायी जिसका जिक्र हमें उनकी आत्मकथा सत्य के साथ प्रयोग में मिलती है। नेल्सन मंडेला एक ऐसे व्यक्तित्व हैं जिन्होंने दक्षिण अफ्रीका में जो विभेद पैदा करने वाली व्यवस्था थी उसके खिलाफ लड़े। इस प्रतिरोध के लिए उन्हें जेल तक का जीवन मिला और यदि डॉ. आंबेडकर की बात की जाये तो वह एक अलग प्रकार के संघर्ष करते हुए मिलते हैं। भारतीय वर्ण-व्यवस्था में व्याप्त छुआछूत जैसी समस्या से जूझते हुए ऐसे समाज की मुक्ति का आग्रह उन्होंने किया जिससे सामाजिक न्याय स्थापित हो सके। छुआछूत के खिलाफ भारत में गांधी के भी अपने तर्क व विरोध थे लेकिन डॉ. आंबेडकर स्वानुभूति व सहानुभूति विमर्श के आधार पर बात करें तो गांधी के आग्रह को वह कमतर आंकते हैं। इन सबके बावजूद गांधी ने जो हरिजन उद्धार और अछूतोद्धार की बात की है उसे सामाजिक न्याय की लड़ाई ही कहेंगे और आज भी जब मनुष्यता की स्थापना की बात की जाती है तो गांधी अपने वैचारिकी के साथ विमर्श के केंद्र में मिलते हैं।

दूसरी बड़ी साम्यता आंबेडकर, नेल्सन मंडेला और गांधी के बीच यह रही है कि सभी मानवीय पक्ष के लिए संघर्ष करते हुए मिलते हैं। सच्चे मायने में देखा जाये तो यह उनका जो संघर्ष है वह सहिष्णु समाज की स्थापना के लिए लगता है। दूसरा जो महत्वपूर्ण पक्ष है तीनों के संघर्ष में वह है, औपनिवेशिक सभ्यता के खिलाफ किया जाने वाला संघर्ष जो एक क्रूर व अमानवीय सभ्यता की खिलाफत है। यह सभी महापुरुष प्रतिरोध की बुनियाद पर स्वयं को बड़ा बनाते हैं।

तीसरी बड़ी साम्यता है कि तीनों अपने संघर्ष के दौरान अहिंसक प्रतिरोध के साथ संघर्ष करते हैं। वे अपने नैतिक बल को अपनी ताकत बनाते हैं। डॉ. आंबेडकर, गांधी से भिन्न हैं क्योंकि वह अहिंसक प्रतिरोध करते हैं लेकिन वह कभी जताते नहीं की हम अहिंसक प्रतिरोध कर रहे हैं। गांधी ने अहिंसक होने, अहिंसक वृत्ति वाला जीवन-आचरण बर्ताव करने और उसे अहिंसक तरीके से प्रतिपादित करने की पद्धति बताते हैं, यह उनकी खूबी है। वह चाहते हैं कि सभी इसे अपने जीवन का हिस्सा बनायें। नेल्सन मंडेला गांधी के अहिंसक आन्दोलन से प्रभावित थे, यह पूरी दुनिया जानती है और वह दक्षिण अफ्रीका में अपने आन्दोलन के दौरान गांधी को पूर्णतया अपनाते हैं और उस क्रूरता की सभी विद्रूप अवस्था का जेल में रहकर प्रतिरोध करते हैं।

मूल्यगत निष्ठा व स्थापनाएं

हम जानते हैं कि डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर केवल भारतीय संविधान के निर्माता एवं करोड़ों शोषित-पीड़ित, वंचित वर्ग के मसीहा ही नहीं थे, वरन श्रेष्ठ समाज-सुधारक, विचारक, चिंतक, अर्थशास्त्री, शिक्षाशास्त्री, पत्रकार, धर्म-ज्ञाता, कानूनविद एवं नीतिनिर्माता और महान सामाजिक परिवर्तन के अग्रदूत थे। उन्होंने समाज और राष्ट्र के साथ जीवन के हर पहलू पर अपनी अमिट वैचारिकी प्रकट की है। सामाजिक बंधुता के आधार पर भारत निर्माण वह चाहते थे। वैचारिक अस्पृश्यता और वास्तविक अस्पृश्यता के बरक्स चल रहे अपने चिंतन को उन्होंने कभी राजनीतिक स्वार्थ के लिए नहीं रेखांकित क्या अपितु देखा जाय तो उनका जीवन इस चीज से लड़ते हुए हमें मिलता है कि वह भारत की अनेक भ्रांतियुक्त धारणाओं को जनमानस से मिटाना चाहते हैं। डॉ. आंबेडकर ने जिस प्रकार अपने विभिन्न वक्तव्यों को प्रस्तुत किया वे केवल वक्तव्य नहीं लगते। अपितु देखा जाये तो उनके चिंतन व आन्दोलन में वे स्थापनाएं स्थान पाती हैं, जिससे व्यक्ति गरिमा के साथ जीवन जी सके।

गांधी के अहिंसा, सत्य, सत्याग्रह, उपवास, ब्रह्मचर्य, स्वदेशी, सर्वधर्मसमभाव और सर्वोदय के दर्शन को जब कोई अध्येता समझने की कोशिश करता है तो उसे गांधी भी मानव जीवन की स्थापनाओं को स्थापित करते हुए मिलते हैं। सामजिक समरसता का उनका प्रयास था। छूआछूत जैसी समस्या के खिलाफ उनके हरिजन व यंग इण्डिया में छपे हैं। भारतीय समाज में व्याप्त कुरूतियों को वह कभी स्वीकार नहीं करते हैं और औपनिवेशिक सभ्यता का प्रतिकार कोई उनसे ही सीखे वह अहिंसा के बल को तोप बल के सामने खड़ा करके जिस प्रकार अंग्रेजी

व्यवस्था को उखाड़ फेंकने का सहस दिखाते हैं वह अद्‌भुत है। उनकी लड़ाई प्रतीकात्मक भी है तो उसके भीतर अहिंसा की स्थपना है।

नेल्सन मंडेला अपने देश में रंगभेद के खिलाफ लड़ाई के लिए जाने जाते हैं। वह दक्षिण अफ्रीका के पहले अश्वेत राष्ट्रपति थे जिसने रंगभेद विरोधी नीतियों के खिलाफ जमकर संघर्ष किया और दुनिया के सामने एक अद्‌भुत उदाहरण प्रस्तुत किया कि अहिंसक संघर्ष के माध्यम से किसी क्रूरतम व्यवस्था से कैसे लड़ा जा सकता है और मूल्यों की निष्ठा को स्थापित किया जा सकता है जिसमें सार्वभौमिक स्थापनाएं भी हों। 1944 में अफ्रीका नेशनल कांग्रेस में शामिल होने के बाद लगातार वे रंगभेद के खिलाफ लड़ते रहे और राजद्रोह के आरोप में 1962 में गिरफ्तार हुए। उम्रकैद की सजा सुनाकर रॉबेन द्वीप पर उन्हें भेजा गया तो उन्होंने इसमें भी प्रकृति द्वारा किया जाने वाला कोई न्याय नाम दिया। उन्हें पढ़कर ऐसा लगता है कि सजा से भी नेल्सन मंडेला का उत्साह कम नहीं हुआ था और न वे कभी विचलित हुए। जेल में अश्वेत कैदियों को भी लामबंद उन्होंने किया था, इसके अभिलेख मौजूद हैं। उन्हें जेल में लोग 'मंडेला विश्वविद्यालय' कहकर पुकारते थे। वह जीवन के 27 वर्ष कारागार में बिताने के बाद अपने स्वभाव को मानवीय जीत के लिए जोड़े रखे और जैसा की संपूर्ण विश्व को विदित है कि अंततः 1 फरवरी, 1990 को उनकी रिहाई हुई और अफ्रीका के प्रथम अश्वेत राष्ट्रपति का उन्हें गौरव प्राप्त हुआ। शांतिप्रिय नीति द्वारा उन्होंने एक लोकतांत्रिक एवं सर्वसमावेशी सहिष्णु बहुजातीय अफ्रीका की स्थापना करने की कोशिश की। मंडेला रंगभेद की जो लड़ाई लड़ रहे थे वह काफी हद तक समाप्त हुई और बाद में उनके विरोधी भी उनके प्रशस्तिगान करते नहीं थके, ऐसे प्रमाण हैं। यह संघर्ष और सफलता भले एक शानदार छवि नेल्सन मंडेला को प्रदान की है लेकिन क्या आप जानते हैं कि इसकी प्रेरणा स्रोत वह कौन महान व्यक्ति था जिसने मंडेला के जीवन में मोड़ ला दिया और वह खुद से अधिक समष्टि की सोचने लगे। जी कवि, इतिहासकार सोखा ही थे जिन्हें क्रूरून मघई के नाम से जाना जाता था। वह इस महान मंडेला के प्रेरणा स्रोत थे। इन्हें सुनकर उन्हें यह एहसास हुआ की सत्य कहने से न डरना चाहिए और न ही संघर्ष करने से पीछे हटना चाहिए चाहे सत्ता कितनी भी ताकतवर क्यों न हो। आज पूरी दुनिया मंडेला के लिए नतमस्तक होती है। मंडेला को उनके कार्यों के लिए दुनिया भर से पुरस्कार एवं सम्मान मिले हैं। उन्हें विश्व शांति के लिए 'नोबेल पुरस्कार' 1993 में तथा 2008 में भारत के प्रतिष्ठित 'गांधी शांति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

मंडेला रंगभेद की जो लड़ाई लड़ रहे थे वह काफी हद तक समाप्त हुई और बाद में उनके विरोधी भी उनके प्रशस्तिगान करते नहीं थके, ऐसे प्रमाण हैं। यह संघर्ष और सफलता भले एक शानदार छवि नेल्सन मंडेला को प्रदान की है लेकिन क्या आप जानते हैं कि इसकी प्रेरणा स्रोत वह कौन महान व्यक्ति था जिसने मंडेला के जीवन में मोड़ ला दिया और वह खुद से अधिक समष्टि की सोचने लगे। जी कवि, इतिहासकार सोखा ही थे जिन्हें क्रूरून मघई के नाम से जाना जाता था।

इन तीनों व्यक्तित्वों के जीवन आदर्श यह बताते हैं कि स्थापनाएं व मूल्य व्यक्ति के लिए ऐतिहासिक पृष्ठ तैयार करते हैं। इन स्थापनाओं में निःसंदेह एक जो विशिष्ट बात है वह है उनकी सत्य की खोज। मनुष्य के हित, उनके जीवन की मंगलकामना ही तो इन महापुरुषों का उद्देश्य रहा है।

द्वैध के साथ द्वैध की सीमाओं से परे

जीवन में द्वैध और विशिष्ट मत-मतांतर के बावजूद इन तीनों महापुरुषों के अवदान उल्लेखनीय हैं। फिलहाल इस पक्ष को जानना इसलिए जरूरी है क्योंकि प्रायः मत-भेद की वजह से अनेक प्रतिरोध की ताकते संघर्ष से मुख मोड़ लेती हैं। इस सन्दर्भ में आंबेडकर, गांधी और मंडेला जैसा कोई उदहारण हमें कदाचित मिलता है जो विभिन्न मतभेद के बावजूद या संघर्ष की गुंजाइश के बावजूद एक नए लक्ष्य की और बढ़ते हैं। हम सभी जानते हैं कि नेल्सन मंडेला को भारत का गांधी शांति पुरस्कार से विभूषित किया गया। उन्हें दक्षिण अफ्रीका का गांधी भी

कहा जाता है। उनका जीवन ऐतिहासिक रूप से अहिंसक समाज की स्थापना के लिए माना जाता है और जिसका आधार नि:संदेह उनका आत्मबल, इच्छाशक्ति और गांधी जी के वैचारिकी से प्राप्त प्रेरणाओं से भरा हुआ मिलता है। वह समष्टि की ज्यादा सोचते हैं, वैयक्तिक कम हैं। गांधी ने जो प्रेम के नियम पर आधारित सामाजिक संरचना की मांग अपने लेखन, चिंतन और दर्शन में स्थापित करने की कोशिश की। दक्षिण अफ्रीका के गाँधी यानि नेल्सन मंडेला उन्हीं मूल्यों और जीवन आचरण के साथ हमें मिलते हैं। गांधी ने वर्षों जेल में बिताये तो नेल्सन मंडेला के जेल-जीवन की कहानी कोई कम नहीं है। एंटोनियो गुटेरेस, संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने वार्षिक व्याख्यान के दौरान सन 2020 में कहा था, नेल्सन मंडेला लाखों दक्षिण अफ्रीकी लोगों को आजाद कराने के लिए अपने जेल जीवन से ऊपर उठे और एक वैश्विक प्रेरणा के आधुनिक प्रतीक बन गए। उन्होंने अपना जीवन उस असमानता से लड़ने के लिए समर्पित कर दिया जो हाल के दशकों में दुनिया भर में संकट के स्तर तक पहुंच गई है और हमारे भविष्य के लिए एक बढ़ता खतरा बन गई है। वह कैदी नंबर 46664 नाम से दक्षिण अफ्रीका के विख्यात कैदी रहे। 27 साल जेल में कोई मामूली बात नहीं। चेहरे पर जोश और हवा में तनी दाहिने हाथ की मुट्ठी मंडेला की पहचान थी। उनकी ऐसी ही तस्वीर आज भी केपटाऊन से कुछ मील दूर समुद्र के बीच एक टापू जिसमें वह कैद रहे, वहां लगी है। वह इस बात का प्रमाण है कि वह कितने जीवटता के साथ अपनी प्रतिबद्धता को कायम रखने वाले इन्सान थे। इस रोबेन आइलैंड जेल में उन्हें 10 से 14 घंटे मेहनत करायी गयी थी। पत्थर तुड़वाए गए। उनकी आँखों की परेशानियाँ उन्हें इसी जेल से मिली। मंडेला ने जेल की डायरी में यह सारी चीजें उद्धृत की है जिसे देखकर कोई भी हतप्रभ रह जाएगा।

यदि डॉ. आंबेडकर की बात की जाए तो द्वैध के साथ डॉ. आंबेडकर इसलिए मिलते हैं क्योंकि भारत में औपनिवेशिक सभ्यता के खिलाफ लड़ने वाले डॉ. आंबेडकर को गाँधी पूर्णतया पसंद नहीं थे। गाँधी सनातनी थे। गाँधी राम को मानने वाले थे। गाँधी वर्ण-व्यवस्था को भी स्वीकार करते थे। गाँधी ने हरिजनोद्धार के लिए काम किया और उन्हें भगवान का जन बताया। छुआछूत की खिलाफत की और सही मायने में वह अस्पृश्य समाज द्वारा किए जाने वाले कर्म में शौचालय की सफाई स्वयं करने से गुरेज नहीं करते थे। वह खुद को हिन्दू कहने में संकोच नहीं करते लेकिन डॉ. आंबेडकर का मतभेद यह था कि हिंदू परंपरा को मनना। और अछूतोद्धर की बात करना एक साथ संभव नहीं है। छुआछूत की जड़ें तो वर्णव्यवस्था में ही विद्यमान है। यदि हम उसको ठीक ठहराते हैं, तो कदाचित हम भारत से छुआछूत के विरोधी हो सकते हैं। इस द्वैध के साथ आंबेडकर शोषितों, वंचितों के अधिकार व साथ ही प्रतिभागिता के हिमायती थे। उनका मानना था कि बिना बराबरी-इक्वैलिटी के हम सामाजिक समरसता कायम नहीं कर सकते। औपनिवेशिक सभ्यता के साथ डॉ. आंबेडकर का इस प्रकार भारत की आतंरिक व्यवस्था में रूढ़िगत चीजों के साथ जो प्रतिरोध था वह यह इंगित करता है कि डॉ. आंबेडकर, गांधी की सोच को पूर्णतया स्वीकार नहीं करते क्योंकि इक्वैलिटी के लिए भी हिंदू वर्णव्यवस्था में कोई विशेष गुंजाइश नहीं है। अश्वेतों के खिलाफ लड़ रहे नेल्सन मंडेला ने नि:संदेह गांधी के अहिंसक सिद्धांत को अपनाया। वह गांधी की वैचारिकी से द्वैध नहीं रखते। वह एक देश के नागरिकों के बीच व्याप्त रंगभेद की लड़ाई लड़ते हुए मिलते हैं। इन सबके बावजूद गांधी को भी एक बार समझने की यदि कोशिश की जाये तो गांधी का अपना

एंटोनियो गुटेरेस, संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने वार्षिक व्याख्यान के दौरान सन 2020 में कहा था, नेल्सन मंडेला लाखों दक्षिण अफ्रीकी लोगों को आजाद कराने के लिए अपने जेल जीवन से ऊपर उठे और एक वैश्विक प्रेरणा के आधुनिक प्रतीक बन गए। उन्होंने अपना जीवन उस असमानता से लड़ने के लिए समर्पित कर दिया जो हाल के दशकों में दुनिया भर में संकट के स्तर तक पहुंच गई है और हमारे भविष्य के लिए एक बढ़ता खतरा बन गई है।

द्वैध है जिससे वह लड़ते हैं। उन्होंने औपनिवेशिक भारत के समय की परिस्थितियों के बीच जो एकीकरण की चुनौती थी, उससे निपटते हुए जो द्वैध महसूस किया उसके कई उदहारण भारतीय राजनीतिक व सांस्कृतिक सामाजिक संरचना में मिलते हमें हैं। इसे उन्होंने हरिजन, यंग इण्डिया में समय समय पर लिखा भी और अपने पत्रों में भी लिखा है। सम्पूर्ण गांधी वांग्मय का अवलोकन करते हुए ऐसे कई मौके मिलते हैं जहाँ गांधी खुद को अकेला महसूस करते हैं क्योंकि उनके सामाजिक न्याय की लड़ाई को भी प्रश्नांकित किया जाता है। द्वैध के इस संघर्ष के बीच हमें तीनों को यदि पढ़ने-समझने का मौका मिले तो इससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि तीनों महापुरुष न्याय की मांग नहीं कर रहे हैं, गरिमा के लिए संघर्ष नहीं कर रहे हैं।

डॉ. आंबेडकर का शिक्षा के सन्दर्भ में विचार बहुत प्रसिद्ध हुआ है कि शिक्षा शेरनी का दूध है जो भी पीएगा दहाड़ेगा लेकिन उनकी जो मुख्य शिक्षा संबंधी बात थी वह यह थी कि मेरी बड़ी इच्छा है कि हममें से हरेक को विद्यावान होना चाहिए। चरित्र के बगैर शिक्षा की कीमत केवल शून्य है।

न्याय व गरिमा के लिए संघर्ष

गांधी के हरिजन, मंडेला के अश्वेत और आंबेडकर के शोषित, वंचित-जन न्याय व गरिमा की मांग करते हैं। यह एक ऐसी विशिष्ट मांग है जो मानवीय संवेदना की मांग है। इसके लिए तीनों का अपना-अपना संघर्ष अपनी-अपनी तरह से नई गाथाएं लिखता है। न्याय और गरिमा चाहे वह शोषण से मुक्ति के लिए हो, चाहे वह रंगभेद से मुक्ति के लिए हो या छुआछूत से मुक्ति के लिए हो, सभी इसके हकदार हैं। औपनिवेशिक सभ्यता से लड़ाई और व्यवस्था की रूढ़िवादी सोच से लड़ाई भले अलग-अलग तरह से लड़ी जा रही हों यहाँ लेकिन सबका उद्देश्य न्याय व गरिमा के लिए रहा है, यह एक सच है। नेल्सन मंडेला के बारे में कहा गया है, मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा की थीम ''हम सभी के लिए गरिमा और न्याय'', नेल्सन मंडेला फाउंडेशन के तत्वावधान में जश्न है। सभी के लिए गरिमा और न्याय के मूल्य दोनों थे मंडेला के नेतृत्व में जिसमें दक्षिण अफ्रीका और उसकी मुक्ति संघर्ष के नैतिक दिशा-निर्देश प्रामाणिक हैं। इसमें विश्व स्तर पर और स्थानीय स्तर पर दोनों स्तर पर ''हम सभी के लिए गरिमा और न्याय'' की प्रतिध्वनि है। नेल्सन मंडेला ने कहा था, 'हमारे समय की चुनौतियों में से एक... हमारे लोगों की चेतना में मानवीय एकजुटता की भावना, एक दूसरे के लिए और दूसरों के कारण दूसरों के माध्यम से दुनिया में रहने की भावना को फिर से स्थापित करना है।' एंतोनियो गुटेरेस ने मंडेला वार्षिक व्याख्यान में कहा था कि जैसा कि नेल्सन मंडेला ने कहा था, और मैं उद्धृत करता हूं, 'शिक्षा सबसे शक्तिशाली हथियार है जिसका उपयोग हम दुनिया को बदलने के लिए कर सकते हैं।' डॉ. आंबेडकर का शिक्षा के सन्दर्भ में विचार बहुत प्रसिद्ध हुआ है कि शिक्षा शेरनी का दूध है जो भी पीएगा दहाड़ेगा लेकिन उनकी जो मुख्य शिक्षा संबंधी बात थी वह यह थी कि मेरी बड़ी इच्छा है कि हममें से हरेक को विद्यावान होना चाहिए। शिक्षा के साथ मनुष्य का चरित्र भी होना चाहिए। चरित्र के बगैर शिक्षा की कीमत केवल शून्य है। हिन्द स्वराज में गाँधी ने लिखा है कि एक अंग्रेज विद्वान हक्सली ने शिक्षा के बारे में यों कहा है-उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शद्ध, शांत और न्यायदर्शी (इंसाफ को परखने वाली) है। उसने शिक्षा पाई है, जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इन्द्रियां उसके बस में है, जिसकी भावनाएं बिलकुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपने जैसा मानता है। एक आदमी ही सच्चा शिक्षित मन जाएगा, क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।

इससे यह स्पष्ट होता है कि चाहे मंडेला हों या आंबेडकर या महात्मा गांधी सबने एक ऐसे तत्व को ही अंततः खोज करते हैं जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी का उद्धार हो सकता है और वह है शिक्षा। प्रतिरोध एवं संघर्ष के अतिरिक्त इनके जीवन से जो सबसे अहम् बात निकलकर आती है वह है हर व्यक्ति की शिक्षा। विश्व के सभ्यता

परिवर्तन में शिक्षा के इस महनीय योगदान को समझने वाले व्यक्तित्व यह हमें बताते हैं कि उनके आत्मबल, साहस, संघर्ष एवं अहिंसक प्रतिरोध ने उनके अंतश्चेतना को प्रकाशित किया है जिससे हम उनका नाम आदर से आज ले रहे हैं। आज वे हमारी इस पीढ़ी के लिए जो लीगेसी छोड़कर गए हैं वे हमारे इस पीढ़ी के बहुआयामी विकास की आग्रही हैं। वे हमसे यह आग्रह कर रही हैं कि जो हमारी वर्तमान चुनौतियाँ हैं उसका समाधान हमें ही खोजना है। विश्व में रंगभेद कम नहीं हुआ है। रंगभेद अब भी विद्यमान है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के अध्यक्ष चबा कोरोसी ने 2023 में आह्वान किया कि नस्लभेद एक वैश्विक समस्या है, और हर एक देश को, इसके विरुद्ध कड़ा रुख़ अपनाना होगा। अफीकी मूल के लोगों पर स्थाई फोरम के दूसरे सत्र को सम्बोधित करते उन्होंने हुए कहा था, नस्लभेद और खुद से भिन्न लोगों के लिए नफरत (xenophobia) हमारे समुदायों को खोखला करना जारी रखे हुए है, जिस तरह कि कोई दाग या किसी घाव का निशान, समाज के ताने-बाने को कमजोर करता है। ये घाव या दाग जिस नफरत व हिंसा को उकसाते हैं, वो अब भी मौजूद है, और ये हालात, नस्लीय हिंसा को इसके तमाम रूपों में खत्म करने के लिए, हमारे सामूहिक प्रयासों की मांग करते हैं। हमें इन अमानवीय व शर्मनाक विरासतों को ख़त्म करना होगा, और ये हमें बिल्कुल अभी करना होगा। 10 विश्व में व्याप्त नस्लभेद के अलावा डॉ. आंबेडकर का जो स्वप्न था कि बराबरी विद्यमान हो, वह एसडीजी का एक हिस्सा बनकर रह गया है। गाँधी शांतिप्रिय दुनिया चाहते थे लेकिन युक्रेन व रूस तथा दूसरे कई देश युद्ध लड़ रहे हैं। लेकिन एक सच यह भी है कि कोई व्यक्ति अपनी आयु भर जी सकता है और संघर्ष करके अपने और दूसरों के जीवन में परिवर्तन ला सकता है। इसके बाद की जिम्मेदारी तो आने वाली पीढ़ी की होती है। आज जब क्लाइमेट चेंज-जलवायु परिवर्तन, गरीबी, भुखमरी युद्ध और शरणार्थियों की समस्या हमारे सामने विकराल रूप में आ रही है तो सामाजिक न्याय, टिकाऊ शांति, टिकाऊ विकास और सतत सनातन सभ्यता हेतु उपाय हमें खोजने होंगे। हम गाँधी, आंबेडकर, मंडेला से वैचारिक रूप से प्रभाषित होकर कुछ अच्छा कर ही सकते हैं. उनके सत्य की खोज के बाद अब हमारे सत्य की प्रतिष्ठा की बारी है, यदि इसको समझ सकें तो हम पृथ्वी पर बड़े लक्ष्य की ओर बढ़ सकेंगे।

सन्दर्भ सूची:

1. Raenette Taljaard, Panel Discussion, Dignity and Justice for all of Us, 60th Anniversary of the Universal Declaration of Human Rights Reflecting On Human Rights In Africa Today Human Rights Lecture and Roundtable Discussion, 10 December 2007, United Nations Office of the High Commissioner for Human Rights, South African Human Rights Commission and Nelson Mandela Foundation, South Africa, 2007 Page. 15
2. सुशील कपूर, नेलशन मंडेला, कैदी से राष्ट्रपति बनने की कहानी, विद्या विहार, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 27
3. Tackling The Inequality Pandemic: A New Social Contract For A New Era, United Nations Secretary-General António Guterres's Nelson Mandela Annual Lecture 2020, New York, 18 July 2020.)
4. Raenette Taljaard, Panel Discussion, Dignity and Justice for all of Us, 60th Anniversary of the Universal Declaration of Human Rights Reflecting On Human Rights In Africa Today Human Rights Lecture and Roundtable Discussion, 10 December 2007, United Nations Office of the High Commissioner for Human Rights, South African Human Rights Commission and Nelson Mandela Foundation, South Africa, 2007 Page. 15)
5. Ibid
6. (Tackling The Inequality Pandemic: A New Social Contract For A New Era, United Nations Secretary-General António Guterres's Nelson Mandela Annual Lecture 2020, New York, 18 July 2020.)
7. बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वांग्मय पृ. 105...
8. बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वांग्मय 317
9. गाँधी, हिन्द स्वराज, नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद, पृष्ठ-89
10. https://news.un.org/hi/story/2023/05/1068657

(लेखक भारत गणराज्य के महामहिम राष्ट्रपति जी के विशेष कर्तव्य अधिकारी रह चुके हैं वर्तमान में पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा में चेयर प्रोफेसर हैं।)

संपर्क: चेयर प्राफेसर, पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, घुद्दा, बठिंडा-151401 (पंजाब) मो. 9818759757 Email: hindswaraj2009@gmail-com

•

इक्कीसवीं सदी में मदीबा और बापू के वैचारिक आदर्श

संजीत कुमार

मदीबा अर्थात् नेल्सन रोलिहलाहला मंडेला और बापू अर्थात महात्मा गांधी, सरकारी शोषण के खिलाफ संघर्ष में, विश्व इतिहास में, दो सबसे महान नेता हुए जिन्होंने अपने देश दक्षिण अफ्रीका एवं भारत के माध्यम से वैचारिक आदर्शों की ऐसी मिसाल रखी जिसकी प्रासंगिकता युगों-युगों तक बनी रहेगी और आने वाली भविष्य की पीढ़ियों को अपनी चमक से प्रकाशित करती रहेगी।

नेल्सन रोलिहलाहला मंडेला यह नाम अलग-अलग लोगों के द्वारा दिया गया जो काफी दिलचस्प है। रोलिहलाहला श्री मंडेला जी के जन्म का नाम था जिसका अर्थ होता है "पेड़ की शाखा को खींचना" लेकिन सामान्य बोलचाल की भाषा में उसका अर्थ है "उपद्रव करने वाला" उनके पिताजी ने यह नाम उन्हें दिया था।

जब उनकी स्कूली शिक्षा प्रारंभ हुई तब स्कूल में पहले ही दिन उनकी शिक्षिका मिस मडिंगने ने उन्हे 'नेल्सन' नाम दिया और यह शायद ब्रिटिश औपनिवेशिक मानसिकता का प्रभाव था क्योंकि उन दिनों अफ्रीकी बच्चों को अंग्रेजी नाम देना एक रिवाज था और दूसरा कारण यह भी था कि, अफ्रीकी नामों का उच्चारण थोड़ा मुश्किल था परन्तु मिस मडिंगते ने मंडेला जी के लिए नेल्सन नाम ही क्यूं चुना, उसकी स्पष्टता नहीं है।

मदीबा उपाधि मंडेला जी के कबीले से जुड़ा हुआ है और यह पूर्वजों के वंश का सूचक है। मदीबा एक थेम्बू सरदार का नाम है जिसने 18वीं सदी में ट्रांसमेई पर शासन किया था। दक्षिण अफ्रीका में कबीले के नाम का इस्तेमाल उपनाम से ज्यादा महत्व रखता है और उसे काफी इज्जत वाला समझा जाता है।

मंडेला जी को 'खुलु' नाम से भी जाना जाता है जिसका अर्थ होता है सर्वोत्तम महान व्यक्ति।

दूसरी तरफ चर्चा करते हैं बापू अर्थात् मोहनदास करमचंद गांधी की, उन्हें बापू की उपाधि 6 जुलाई 1944 को सुभाष चंद्र बोस के द्वारा पत्नी कस्तूरबा गांधी के निधन पर शोक में सिंगापुर रेडियो के माध्यम से दी गई थी हालाँकि कुछ जानकार ऐसा मानते हैं कि, यह उपाधि उन्हें राजकुमार शुक्ल के द्वारा दी गई थी जिन्होंने गांधीजी को 1917 में चंपारण सत्याग्रह के पहले वहाँ आमंत्रित किया था।

जब उनकी स्कूली शिक्षा प्रारंभ हुई तब स्कूल में पहले ही दिन उनकी शिक्षिका मिस मडिंगने ने उन्हे 'नेल्सन' नाम दिया और यह शायद ब्रिटिश औपनिवेशिक मानसिकता का प्रभाव था क्योंकि उन दिनों अफ्रीकी बच्चों को अंग्रेजी नाम देना एक रिवाज था और दूसरा कारण यह भी था कि, अफ्रीकी नामों का उच्चारण थोड़ा मुश्किल था परन्तु मिस मडिंगते ने मंडेला जी के लिए ...।

'महात्मा' की, उपाधि गांधीजी को रवींद्रनाथ टैगोर ने दी थी पर कुछ इतिहासकार मानते हैं कि, यह उपाधि 1915 में वैद्य जीवन राम कालिदास ने दी थी। "राष्ट्रपिता" कहने का पहली बार श्रेय जवाहरलाल नेहरू को जाता है पर कुछ जानकार इस उपाधि का श्रेय सुभाष चंद्र बोस को देते हैं।

दोनों महामानव के नाम और उपाधि देने का श्रेय जिस किसी को भी जाता है पर अपने देश के लोगों को शोषण और उत्पीड़न से मुक्ति के लिए इन्होंने कठोर यातनाएँ और असहनीय पीड़ा सही।

जहाँ गांधी ने ब्रिटिश शासन व्यवस्था से लड़ने के लिए लाखों भारतीयों को संगठित किया वही 'मदीबा' ने रंगभेद के अत्याचारी शासन के खिलाफ दक्षिण अफ्रीका के संघर्ष का नेतृत्व किया। स्वतंत्रता की अपनी लंबी यात्रा में दोनों नेताओं ने हर कदम पर यातनाएँ झेली, मुश्किल हालात का सामना किया परंतु विपरीत हालात में भी आगे बढ़ते रहे और अंत में सफलता पाई। आज 21वीं सदी में दुनिया के लोगों को इससे सीख लेनी चाहिए।

दक्षिण अफ्रीका एक प्रयोगशाला

गांधीजी वर्ष 1893 में 24 वर्ष की उम्र में एक मुकदमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका गए थे। वहाँ गांधीजी की राजनीतिक और नैतिक विचारों की जड़ें मजबूत हुई। दक्षिण अफ्रीका में अपने रंग की वजह से भेद-भाव झेलना पड़ा। पीटरमैरिट्सबर्ग में ट्रेन से उन्हें बाहर फेंक दिया गया था क्योंकि वह सिर्फ गोरों के लिए आरक्षित थी परंतु उन्होंने उसका विरोध किया और अगले दिन उन्हें ट्रेन में यात्रा करने की इजाजत मिल गई। इस घटना ने उनका जीवन झकझोर दिया और दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों और अश्वेतों के साथ होने वालें भेदभावों के खिलाफ मुखर होकर कई लड़ाइयाँ लड़ी और सफल भी हुए।

दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी द्वारा किए कुछ मुख्य विरोध प्रदर्शन इस प्रकार है:

1. 1814 का अफ्रीकी और भारतीयों के प्रति नस्लीय भेदभाव के खिलाफ अहिंसक प्रदर्शन।
2. 1899 में भारतीय एम्बुलेंस कोर का आयोजन ताकि ब्रिटिश बोअर युद्ध के प्रकोप से उत्पन्न मानवता के प्रति खतरे के भाव को समझ सकें पर भारतीयों और अश्वेतों पर जातीय भेदभाव और अत्याचार अंग्रेजों द्वारा जारी रहे।
3. डरबन के पास फिनिक्स फार्म की स्थापना जहाँ गांधीजी ने अपने लोगों को अहिंसक सत्याग्रह के लिए प्रेरित किया, उस फार्म को सत्याग्रह की जन्मस्थली माना जाता है।
4. 1906 में ट्रांसवाल एशियाटिक अध्यादेश जो कि, भारतीयों के खिलाफ गठित किया गया था उसके खिलाफ अहिंसात्मक सत्याग्रह अभियान गांधीजी के द्वारा चलाया गया। इसके बाद जून 1907 में इस काले अधिनियम के खिलाफ सत्याग्रह भी किया।
5. 1908 में अहिंसक आंदोलन के आयोजन के लिए जेल की सजा भी सुनाई गई परंतु ब्रिटिश राष्ट्रमंडल नेता जनरल स्मट्स के कहने पर रिहा किया गया।
6. 1913 में गैर-ईसाई विवादों मे ओवरराइड और ट्रांसवाल में भारतीय नाबालिकों के हक के लिए सत्याग्रह आंदोलन किया।

जहाँ गांधी ने ब्रिटिश शासन व्यवस्था से लड़ने के लिए लाखों भारतीयों को संगठित किया वही 'मदीबा' ने रंगभेद के अत्याचारी शासन के खिलाफ दक्षिण अफ्रीका के संघर्ष का नेतृत्व किया। स्वतंत्रता की अपनी लंबी यात्रा में दोनों नेताओं ने हर कदम पर यातनाएँ झेली, मुश्किल हालात का सामना किया परंतु विपरीत हालात में भी आगे बढ़ते रहे और अंत में सफलता पाई। आज 21वीं सदी में दुनिया के लोगों को इससे सीख लेनी चाहिए।

दक्षिण अफ्रीका ही वह प्रयोग स्थली थी जहाँ गांधीजी जैसे एक बेहद संकोची सामान्य वकील, जनसमूह के नायक के रूप में उभरा, जिसने अपने व्यक्तित्व से असंख्य लोगों को प्रभावित किया।

भारत में सत्याग्रह का विस्तार और स्वतंत्रता संग्राम मे गांधीजी का संघर्ष

09 जनवरी 1915 को गांधीजी गोपाल कृष्ण गोखले के अनुरोध पर भारत लौटे। गोखले जी ने तत्कालीन राजनीतिक स्थिति एवं सामाजिक मुद्दों के बारे में गांधीजी

को विस्तृत जानकारी दी। 09 जनवरी को अटल बिहारी वाजपेयी जी की सरकार के द्वारा प्रवासी भारतीय दिवस भी घोषित किया गया और वर्ष 2003 से यह हर वर्ष मनाया जा रहा है क्योंकि गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से इसी दिन लौटे थे।

भारत में गांधीजी ने 1917 में चंपारण सत्याग्रह शुरू किया जो कि, किसानों के ब्रिटिश उत्पीड़न के खिलाफ था और यह आंदोलन सफल रहा। 1918 मे गुजरात के खेड़ा में आंदोलन किसानों के बाढ़ से फसल नष्ट होने के बाद उनके टैक्स माफी के लिए हुआ, ब्रिटिश सरकार ने किसानों की माँग मानकर टैक्स कम किया। इसके बाद 1919 के जलियांवाला बाग नरसंहार ने बापू की अंतरात्मा को हिला कर रख दिया और संपूर्ण हिंदुस्तान में क्रोध की अग्नि धधक उठी। गांधीजी ने 1920 मे असहयोग आंदोलन शुरू किया और स्वदेशी आंदोलन के माध्यम से भारतीय उत्पादों के बढ़ावा देने पर जोर दिया। 1930 में नमक सत्याग्रह से भारतीयों की एकता को मजबूत किया। भारत छोड़ो आंदोलन 1942ई० में अंग्रेजों को देश छोड़ने के लिए किया और शांति अहिंसा को ब्रह्मास्त्र के रूप में इस्तेमाल कर ब्रिटिश हुकूमत की कब्र खोद दी। अंततः 15 अगस्त 1947 को भारत लंबी गुलामी के बाद एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप मे अवतरित हुआ और इस तरह गांधी, नागरिक अधिकारों के चौंपियन बन गए जिन्होंने अपने समग्र जीवन को राष्ट्र के नाम समर्पित कर दिया और उदारता और क्षमा की भावना के साथ शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ लड़ाई लड़ी। 30 जनवरी 1948 को मानवता का यह पुजारी हमेशा के लिए सबको छोड़कर चला गया और इतिहास में अपने समृद्ध वैचारिक आदर्शों के साथ अमर हो गया।

मदीबा एक महानायक

जिस प्रकार भारत की आजादी की लड़ाई के आदर्श नायक गांधीजी है ठीक उसी प्रकार दक्षिण अफ्रीका के आजादी में संघर्ष के महानायक अदम्य साहस और सहनशीलता के प्रतीक नेल्सन मंडेला जी हैं। मंडेला ने औपनिवेशवाद, नस्लीय भेदभाव, उत्पीड़न और शोषण का उस दक्षिण अफ्रीका में विरोध किया था जहाँ बापू की राजनीतिक और नैतिक सूझबूझ विकसित हुई। मदीबा ने बर्बरता, शोषण, अत्याचार को अपने सत्य अहिंसा के पथ पर चलकर महान और पराक्रमी कार्य के द्वारा अपने देश दक्षिण अफ्रीका को गुलामी की जंजीर से मुक्त कराया। कहते हैं अधेरा कितना भी घना और ताकतवर हो दीपक की एक छोटी सी रोशनी उसके गुरूर को चकनाचूर कर

देती है। दक्षिण अफ्रीका में सदियों से चली आ रही गुलामी रूपी अंधेरे को 18 जुलाई 1918 को देदीप्यमान हुए मंडेला रूपी दिए और उजाले ने समय के साथ अपने अदम्य इच्छाशक्ति, दृढ़ विश्वास और अहिंसा रूपी अस्त्र से समाप्त किया।

भारत में राष्ट्रपिता के विचारों और आदर्शों को अपनाकर हमने आजादी पाई, जिन विचारों के बीज दक्षिण अफ्रीका में प्रस्फुटित और समृद्ध हुए परंतु दक्षिण अफ्रीका से गांधीजी के भारत लौटने के बाद गांधीजी के नये रूप में वहाँ के लोगों को एक और अफ्रीकन गांधी मिल गया।

कहते हैं बचपन में ही सिर से पिताजी का साया उठने के बाद मंडेला जी के संघर्षपूण जीवन की शुरूआत हुई। 1944 में 26 वर्ष की आयु में अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस में शामिल होकर उन्होंने रंगभेद के ब्रिटिश नीति के खिलाफ आंदोलन शुरू कर दिया। समय के साथ आंदोलन को व्यापक जन सर्मथन मिलने लगा परंतु सत्ता की आँखों में काँटे की तरह वह चुभने लगे 1947 में मंडेलाजी अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस के सचिव बन गए। 1961 में उनपर देशद्रोह का मुकदमा लगा परंतु उन्हें निर्दोष बरी कर दिया गया। 1962 में फिर से मजदूरों को हड़ताल के लिए उकसाने और बिना इजाजत देश छोड़ने के लिए गिरफ्तार किया गया और उन्हें उम्रकैद की सजा हुई।

जेल में नेल्सन मंडेला पर जबर्दस्त अत्याचार किए गए। 8x7फीट के छोटे सेल में उन्हें रखा गया एवं श्वेत वार्डन के द्वारा शारीरिक एवं मानसिक रूप से काफी प्रताड़ित किया गया।

वैश्विक दबाव एवं विरोध के कारण 27 वर्ष जेल में रखने के बाद उन्हें 11फरवरी 1990 को बिना शर्त जेल से रिहा किया गया और तबतक यह शांतिदूत विश्वभर में प्रख्यात हो गया था। जेल में रहते हुए उन्होंने अपनी कथा "लॉग वाक टू फ्रीडम" लिी और जिंदगी के अपने खट्टे-मीठे अनुभवों को व्यक्त किया।

मदीबा के जेल के बाद का जीवन और दक्षिण अफ्रीका की आजादी

गांधीजी के आदर्शो, विचारों और कर्मो को अपनाकर विश्व शांतिदूत के रूप में नेल्सन मंडेला को सबसे विश्वसनीय शख्सियत के रूप में याद किया जाएगा। रंगभेदी अत्याचार और जुल्म के खिलाफ दक्षिण अफ्रीका की जनता की गरिमा और मानवता की प्रतिष्ठा के लिए लगातार अपने अहिंसात्मक आंदोलन से उन्होंने अपना जीवन खपा दिया।

27 अप्रैल 1994 को दक्षिण अफ्रीका में जब चुनाव हुए तो नेल्सन मंडेला को जनता का भरपूर प्यार मिला और पहली बार एक अश्वेत राष्ट्रपति के रूप में 10 मई 1994 को उन्होंने अपना पदभार ग्रहण किया। इस तरह जुल्म जौर ज्यादती के खिलाफ यातनाएँ और काफी पीड़ा सहकर वह दक्षिण अफ्रीका के लोगों के लिए मसीहा बन गए।

कहते हैं बचपन में ही सिर से पिताजी का साया उठने के बाद मंडेला जी के संघर्षपूण जीवन की शुरूआत हुई। 1944 में 26 वर्ष की आयु में अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस में शामिल होकर उन्होंने रंगभेद के ब्रिटिश नीति के लिाफ आंदोलन शुरू कर दिया। समय के साथ आंदोलन को व्यापक जन सर्मथन मिलने लगा परंतु सत्ता की आँखों में काँटे की तरह वह चुभने लगे 1947 में मंडेलाजी अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस के सचिव बन गए। 1961 में उनपर देशद्रोह का मुकदमा लगा परंतु उन्हें निर्दोश बरी कर दिया गया। 1962 में फिर से मजदूरों को हड़ताल के लिए उकसाने और बिना इजाजत देश छोड़ने के लिए गिरफतार किया गया और उन्हें उम्रकैद की सजा हुई।

मदीबा और भारत के संबंध

27 वर्ष जेल में बिताने के बाद 1990 में जब उनकी रिहाई हुई तब अपनी पहली विदेशी यात्रा के लिए उन्होंने अपने राजनीति, गुरू और आदर्श, महात्मा गांधी की धरती को चुना। जेल से रिहा होते ही भारत सरकार ने उन्हें देश के सर्वोच्च सम्मान भारत रत्न से नवाजा और मंडेला जी भारत रत्न पानेवाले पहले गैर-भारतीय बने, बाद में उन्हें 1993 में शांति के लिए नोबेल पुरस्कार दिया गया।

एक प्रख्यात गांधीवादी मंडेला जी ने बापू के सत्य

और अहिंसा के सिद्धातों की साधना की और जीवन पर्यन्त उनके दर्शन को अपनाया। 1993 में अपने देश दक्षिण अफ्रीका में गांधी स्मारक के अनावरण के खास मौके पर मंडेला जी ने कहा था कि, ''महात्मा गांधी हमारे देश के इतिहास के अभिन्न अंग हैं, क्योंकि यहीं पर उन्होंने पहली बार सत्य का प्रयोग किया था और इसी देश में उन्होंने सत्याग्रह को एक संघर्ष की पद्धति और दर्शन के रूप में विकसित किया था''।

भारत सरकार द्वारा उन्हें शांति के प्रयासों के लिए वर्ष 2001 में उन्हें अंतर्राष्ट्रीय गांधी शांति पुरस्कार से नवाजा गया। जब भी मंडेला जी भारत की यात्रा पर आते थे वो भारत देश को अपने राजनीतिक गुरू की पवित्र भूमि के रूप में तीर्थयात्रा मानते थे। हर समय गांधीजी के देश भारत के लोगों और वहाँ के नेताओं को महान कहते थे। वर्ष 1994 से 1999 तक राष्ट्रपति रहने के दौरान उन्होंने भारतीयों को हमेशा आत्मीयता और सम्मान दिया। 05 दिसंबर 2013 को 95 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया। पूरी दुनियां में उन्हें मृत्यु के बाद उनके जीवन यात्रा को याद कर सम्मान दिया गया।

भारत सरकार द्वारा उन्हें शांति के प्रयासों के लिए वर्ष 2001 में उन्हें अंतर्राष्ट्रीय गांधी शांति पुरस्कार से नवाजा गया। जब भी मंडेला जी भारत की यात्रा पर आते थे वो भारत देश को अपने राजनीतिक गुरू की पवित्र भूमि के रूप में तीर्थयात्रा मानते थे। हर समय गांधीजी के देश भारत के लोगों और वहाँ के नेताओं को महान कहते थे। वर्ष 1994 से 1999 तक राष्ट्रपति रहने के दौरान उन्होंने भारतीयों को हमेशा आत्मीयता और सम्मान दिया।

गांधी और मंडेला के बीच क्या-क्या समानताएँ थी

1. गांधी जी और मंडेला जी दोनों राजनीतिक प्रभाव वाले परिवार में जन्म लिए थे। गांधी जी के पिताजी पोरबंदर के दीवान थे जबकि मंडेला जी के पूर्वज थेम्बू लोगों के शासक थे।
2. दोनों ने दक्षिण अफ्रीका में शोषण, अत्याचार, रंगभेद और अन्याय के खिलाफ लड़ाई लड़ी और अंत मे सफलता पाई।
3. दोनों का संघर्ष का तरीका अहिंसात्मक था और जीवन दर्शन सत्याग्रह पर आधारित था।
4. विचारधारा और व्यक्तित्व के कई पहलू एक जैसे थे। दोनों में लक्ष्य पाने की जिद, दृढ़ इच्छाशक्ति, अदम्य साहस और अंतिम जन के लिए चिंता थी। उनका लोकतंत्र में अटूट विश्वास था।
5. दोनों शांतिपूर्ण सह अस्तित्व एवं वसुधैव कुटुंबकम की भावना से ओत-प्रोत थे। मध्यस्थता और सुलह एवं आपसी बातचीत से विवादों का निपटारे में विश्वास रखते थे।
6. सर्वधर्म समभाव एवं मानव मात्र से प्यार उनका स्वभाव था। गांधीजी ने जहाँ भारत में छूआ-छूत, जात-पात के भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाई, मदीबा ने श्वेतों के खिलाफ लड़ने पर 27 वर्षों तक जेल में रहकर असहनीय पीड़ा पाई परंतु राष्ट्रपति बनने के बाद भी श्वेत समुदाय से नफरत नहीं की और सबको एक साथ लेकर देश चलाया।
7. दोनों समावेशी समाज चाहते थे, समाज के गरीब लोगों से उनका विशेष स्नेह एवं लगाव था।
8. गांधीजी को जहाँ भारत में राष्ट्रपिता की उपाधि मिली, बापू के रूप में जन सामान्य मे प्रसिद्धि पाई वही दक्षिण अफ्रीका में मंडेलाजी को ''टाटा'' के नाम से जाना जाता है जिसका मतलब भी पिता होता है।

वर्तमान समय में विश्व समुदाय की प्रमुख चुनौतियाँ

दुनियाँ भर मे कई देशों के बीच बढ़ता तनाव और युद्ध से वैश्विक भू-राजनीति बेहद संकट के दौर से गुजर रही है। रूस और युक्रेन के बीच का युद्ध पिछले कई महीनों से जारी है। जान-माल की भारी तबाही हुई है और अंत निकट भविष्य में दिखाई नहीं पड़ता। दूसरी तरफ मध्य पूर्व में इजराइल-हमास के बीच घमासान युद्ध छिड़ा हुआ है। बेकसूरों की जान जा रही है और मानवता त्राहि-त्राहि कर रही है। चीन-ताईवान अमेरिका-ईरान, आर्मेनिया-अजरबैजान, भारत-चीन, उत्तर कोरिया-दक्षिण कोरिया आदि जैसे कई देशों के बीच आपसी तनाव है।

हथियारों की भीषण होड़ है। शक्ति की दौड़ मे सभी के बीच प्रतियोगिता है परंतु गरीबी-बेरोजगारी, भुखमरी, बीमारी जैसे संवेदनशील मानवीय मुद्दों से कई देशों का भटकाव है। सीरिया, वेनेजुएला, म्यांमार, सूडान आदि देश मानवाधिकारों के लिए गंभीर चुनौती पेश कर रहे हैं। बड़े पैमाने पर शरणार्थियों का पलायन एक वैश्विक आपदा है। युद्ध, उत्पीड़न, गरीबी और अन्य गंभीर स्थितियों से बचने के लिए बड़ी संख्या में प्रवासी अंतरराष्ट्रीय सीमा पार कर रहे हैं।

आतंकवाद, संगठित अपराध और साइबर खतरे पूरे विश्व के लिए चुनौती है। परमाणु हथियारों का प्रसार और शस्त्रीकरण के लिए भगदड़ मूलभूत मानवीय मुद्दों से देशों का भटकाव भविष्य के गहरे संकट की ओर इशारा कर रहा है। वर्ष 2050 तक विश्व की आबादी दस अरब तक पहुँचने की संभावना है स्वास्थ्य संकट, पर्यावरण संकट, निरक्षरता, कुपोषण, महंगाई आदि संकट भविष्य मे चुनौतियाँ पेश करेंगी परंतु इन सबके बीच यह प्राथमिकता हो कि, मानव जाति का अस्तित्व खतरे मे ना पड़े। अहिंसा, प्रेम, भाईचारा, सौहार्द, आपसी बातचीत मजबूत हो तभी संपूर्ण विश्व का कल्याण हो सकता है।

वर्तमान संदर्भ में मदीबा और गांधी के विचारों की प्रासंगिकता

जैसा कि, हमें ज्ञात है, कई देशों के बीच भयावह युद्ध चल रहा है। युद्ध केवल मानवता का संहारक है, यह कभी भी प्रगति और मानवता का पोशक नही हो सकता। युद्ध के बाद इन देशों में समृद्धि आ जाएगी, लोगों के जीवन स्तर में बदलाव होगा ऐसा कतई नहीं है यह सिर्फ एक हठ है, आपसी दुर्भावना है जो विनाश का परिचायक है।

गांधीजी और मदीबा ने जुल्म और अत्याचार की पराकाष्ठा देखी, गंभीर यातनाएँ सही परंतु अपने अहिंसा और सत्याग्रह के पथ से कभी विचलित नहीं हुए और लोगों को अन्याय और उत्पीड़न से मुक्ति दिलाई। संपूर्ण विश्व समुदाय को आपसी सौहार्द, समन्वय, शांति और विश्वास के साथ गांधी और मदीबा के जीवन दर्शन से सी लेना चाहिए। शांति का रास्ता ही सबसे उत्तम रास्ता है, प्रगति का रास्ता है, विश्व कल्याण का रास्ता है।

मध्यस्थता और सुलह से समस्याओं का समाधान खोजा जाना चाहिए जैसा कि, इन दोनों महानुभावों ने किया। मदीबा और गांधीजी दोनों ने अहिंसा को शस्त्र के रूप में अपनाया जबकि आज के देशों में शस्त्रीकरण की होड़ मची है उस पैसों का इस्तेमाल गरीबी, भूमरी, स्वास्थ्य सेवाओं और मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतू उपयोग मे ला कर व्यक्तियों के जीवन में बड़ा बदलाव लाया जा सकता है।

आतंकवाद, संगठित अपराध और साइबर तरे पूरे विश्व के लिए चुनौती है। परमाणु हथियारों का प्रसार और शस्त्रीकरण के लिए भगदड़ मूलभूत मानवीय मुद्दों से देशों का भटकाव भविष्य के गहरे संकट की ओर इशारा कर रहा है। वर्ष 2050 तक विश्व की आबादी दस अरब तक पहुँचने की संभावना है स्वास्थ्य संकट, पर्यावरण संकट, निरक्षरता, कुपोशण, महंगाई आदि संकट भविष्य मे चुनौतियाँ पेश करेंगी...।

व्यक्तिगत जीवन में लोग उनके जीवन से सहनशीलता, क्षमा, दया, करूणा, अहिंसा, दृढ़ इच्छाशक्ति, सौहार्द, सह-अस्तित्व की भावना, बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय का भाव, संपूर्ण मानव जाति के कल्याण की भावना आदि गुणों को अपनाकर इस धरती को स्वर्ग बना सकते हैं यही इन महानुभावों के प्रति हम सबकी सच्ची श्रंद्धाजलि होगी। इन पक्तियों के साथ नमन और वंदन:-

वह अशोक की आत्मा
रण का विजयी योद्धा,
शांति चक्र का धर्म प्रवर्तक, शक्ति पुरोधा,
उठा धरा से पहुँच शिखर
आकाश बन गया,
धरा देती रही
पुत्र इतिहास बन गया।

अहिंसा बना स्वतंत्रता संग्राम का अस्त्र

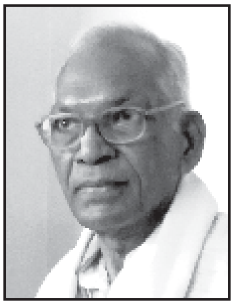

बनवारी

महात्मा गांधी जब पैदा हुए थे तो भारत पराधीन था। उसकी पराधीनता के पीछे केवल ब्रिटेन की राज्य शक्ति नहीं थी। अगर केवल वही होती तो भारत को स्वाधीन करना अपेक्षया सरल रहा होता। इस पराधीनता के पीछे यूरोप की एकजुट शक्ति, उसका जातीय अहंकार और दुर्दम्य हिंसा की भावना भी थी। जैसा कि 1938 में एक भेंट के दौरान हिटलर ने लॉर्ड हालिफैक्स को कहा था कि वे ब्रिटिश साम्राज्य को बनाये रखने के हिमायती हैं और इसके लिए जो भी करना पड़े उसे करने की सलाह देंगे। उनकी सलाह बहुत सरल थी कि गांधी को गोली से उड़ा दो, इतना काफी न हो तो काँग्रेस के बाकी नेताओं को गोली से उड़ा दो। वह भी पर्याप्त न हो तो दो सौ या और अधिक कार्यकर्ताओं को गोली से उड़ा दो। या फिर उन्हें तब तक गोली से उड़ाते रहो जब तक कि भारत के लोग आजाद होने की आशा ही न छोड़ दें। यूरोपीय जाति के इस अहंकार की अभिव्यक्ति अवश्य नाजीवाद में हुई थी, लेकिन वह यूरोप के लोगों का सामान्य स्वभाव था और उसी की अनुगूँज चर्चिल की गांधी और भारत से घृणा में देखी जा सकती थी। अपने साधारण लोगों के प्रति भी उसका दृष्टिकोण इससे भिन्न नहीं था। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान उसने एक बार ब्रिटिश लोगों के बारे में यह विचार व्यक्त किया था कि अगर ब्रिटिश जाति को शुद्ध रखना है तो उसके सभी विकलांग लोगों को नष्ट कर दिया जाना चाहिए।

यूरोपीय समाज की यही हिंसक मनोवृत्ति उसके औद्योगिक साम्राज्य के विकास और विस्तार में देखी जा सकती थी। दैहिक स्तर पर उसने गुलामी को निरर्थक बनाकर उसके उन्मूलन का रास्ता अवश्य प्रशस्त किया था। लेकिन मनुष्य को इन्द्रिय-भोग की ओर धकेलकर उसने मनुष्य मात्र को दास बना देने का प्रबन्ध कर लिया था। यूरोप का औद्योगिक साम्राज्य उसके स्वभाव को एक अतिवादी दिशा में अवश्य ले गया था, पर फिर भी वह उसकी मूल प्रवृत्तियों के अनुरूप ही था। पर यह दिशा भारत के लिए, जिसने सदा मनुष्य के आत्मोन्नयन के अनुरूप व्यवस्था खड़ी करने की कोशिश की, एक अभिशाप ही थी। गांधीजी भारत को पराधीन करने वाली इन सभी शक्तियों और प्रवृत्तियों को देख रहे थे। इसलिए उन्होंने अपना लक्ष्य केवल राजनीतिक स्वाधीनता नहीं रखा था। राजनीतिक स्वाधीनता का

जैसा कि 1938 में एक भेंट के दौरान हिटलर ने लॉर्ड हालिफैक्स को कहा था कि वे ब्रिटिश साम्राज्य को बनाये रखने के हिमायती हैं और इसके लिए जो भी करना पड़े उसे करने की सलाह देंगे। उनकी सलाह बहुत सरल थी कि गांधी को गोली से उड़ा दो, इतना काफी न हो तो काँग्रेस के बाकी नेताओं को गोली से उड़ा दो। वह भी पर्याप्त न हो तो दो सौ या और अधिक कार्यकर्ताओं को गोली से उड़ा दो।

लक्ष्य तो उनकी हर साँस में बसा था। पर भारतीय सभ्यता को क्षीण करने वाली इन दूसरी शक्तियों और प्रवृत्तियों को देखते हुए उन्होंने अपना लक्ष्य भारतीय सभ्यता का पुनरुद्धार बना लिया था। गांधीजी यूरोपीय जाति के अहंकार को तोड़ने के लिए यह आवश्यक समझते थे कि उसकी सभ्यता के राक्षसी स्वरूप को उजागर किया जाय और वे निरन्तर यह दावा करते रहे कि अँग्रेजी राज का भारत को शिक्षित करने और सभ्य बनाने का दावा असत्य और बेतुका है, क्योंकि अँग्रेजों या आधुनिक यूरोप के पास तो ऐसा कुछ नहीं है जिसे सभ्यता कहा जा सके। इसके साथ ही वे भारतीयों में अपनी सभ्यता का गौरव लौटाने का प्रयत्न करते रहे और नैतिक आधारों पर खड़ी हुई भारतीय सभ्यता को आदर्श बताते रहे।

यह चुनौतियाँ तो बाहर ही थीं। भारत में अँग्रेजी राज की उपस्थिति अवश्य थी, लेकिन उसका वास्तविक बल बाहर ही था। लेकिन हमारी पराधीनता में सहायक होने वाली एक आन्तरिक शक्ति भी थी। वह थी इस्लाम के कारण देश की एक तिहाई आबादी का भारतीय सभ्यता से अलगाव। भारत के मुसलमानों की एक सीमित संख्या ही बाहर से आये अरब, तुर्क या अफगानों की वंशज थी। बाक़ी सभी लोग, अधिकांश बलात, इस्लाम स्वीकार करने वाले भारतीय वंश ही थे। लेकिन इस्लाम में उन्हें एक भिन्न धर्म को मानने वाली एक भिन्न बिरादरी होने की शिक्षा दी गयी थी। इस ओढ़ी हुई पहचान को दृढ़ता से बनाये रखने के लिए उन्होंने हिन्दुओं से अपनी शत्रुता की धारणा बना डाली थी। यह धारणा अपने जीवन संघर्ष में फँसे रहने वाले साधारण मुसलमानों में अधिक नहीं थी। लेकिन वह न केवल मुल्ला-मौलवियों में थी, बल्कि पढ़े-लिखे लोगों में और भी ज़्यादा थी। वे अपनी आर्थिक और राजनीतिक सुरक्षा के प्रति सचेत होने के कारण ही यह धारणा नहीं रखते थे, बल्कि उन्हें अपना आत्म-गौरव भी संकट में पड़ा नजर आता था क्योंकि भारत में इस्लाम का इतिहास उसके आक्रान्ताओं के बर्बर कृत्यों से ही भरा हुआ था। हिन्दुओं के एक छोटे वर्ग में इस कड़वे इतिहास की गहरी स्मृति थी। लेकिन बहुसंख्यक हिन्दू अपने स्वभाव और संस्कार के कारण किसी के भी प्रति लम्बे समय तक शत्रुता का भाव बनाये नहीं रख सकते थे। दोनों ओर के इन साधारण भारतीयों के स्वभाव के भरोसे गांधीजी हिन्दू-मुस्लिम समस्या का अन्ततः हल निकालने के प्रति आश्वस्त थे। लेकिन अल्पावधि में और दोनों समुदायों को विभाजित रखकर लड़ाते रहने में अपना राजनैतिक स्वार्थ देखने वाले अँग्रेजों के रहते यह सम्भव नहीं था। गांधीजी यह भी जानते थे कि इस्लाम ने अपने अनुयायियों में साधन और साध्य का विवेक नहीं डाला। अपने माने हुए ईश्वर में सबकी निष्ठा निश्चित करने के लिए वे सभी उचित अनुचित साधनों को अपनाने के पक्षधर रहे हैं। इसलिए धर्मान्तरण के लिए बढ़ती गयी बर्बरता भी उन्हें नैतिक रूप से परेशान नहीं करती।

गांधी जी ने अनुभव किया था कि यूरोपीय सभ्यता के तो केन्द्र में ही हिंसा है। यूरोपीय जाति सदा ही बल की साधक रही है। उसकी मान्यता है कि बल ही जीवन का आधार है और बलवान को निर्बलों पर शासन करने या उन पर अपना नियन्त्रण बनाये रखने का दैवी अधिकार है। यह बात नाजी विचारधारा के मूल में ही नहीं थी, वह समूचे यूरोपीय चिन्तन और सभ्यता का आधार भी रही है। अपनी दो-तिहाई आबादी को उसने सदा दास की स्थिति में रखा है। जब इस दासता का अपनी सीमाओं के बाहर विस्तार करने में उसे सफलता मिल गयी तो उसने अपने समाज पर अंकुश कुछ ढीला कर दिया। अब तक उसका यह नियन्त्रण उसके बौद्धिक और शारीरिक बल के भरोसे था, अब वह केवल उसके बौद्धिक बल पर आधारित है और इसका साधन उसका आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी है। इस्लाम की मूलधारक अरब जाति के स्वभाव और संस्कार के मूल में हिंसा नहीं थी। लेकिन इस्लाम ने साधन के रूप में हिंसा को मान्यता देकर उसके अनुयायियों को कुछ क्रूरतम घटनायें रचने के लिए आजाद कर दिया। विशेष रूप से जब गैर अरब जातियों ने अपनी सत्ता और साम्राज्य का विस्तार करने के लिए इस्लाम को साधन बनाया तो उनके सबसे अधिक काम यह हिंसा की धार्मिक छूट ही आयी। तुर्क और मंगोलों ने अपना आतंक फैलाने के लिए जेहाद का खूब इस्तेमाल किया। इनके विजेताओं ने विजित अनगिनत शहरों में क़त्लेआम मचाया और अमानुषिक क्रूरताएँ बरतीं।

भारतीय सभ्यता इन्हीं सब हिंसक शक्तियों और प्रवृत्तियों के दबाव में थी और उसे उनसे मुक्त करवाने के लिए एक ऐसे अस्त्र की आवश्यकता थी जो हिंसक

1857 के बाद दिखायी थी। गांधीजी की तपस्या से उद्‌भूत अहिंसा के बावजूद ब्रिटिश शासकों की क्रूरता और निर्दयता बनी रही, पर वह भारतीयों को आतंकित किये रहने में असमर्थ हो गयी। गांधीजी के 1919 के पहले सत्याग्रह ने ही भारत के लोगों को इतना निर्भय बना दिया था और मन से वे अपने आप को स्वतन्त्र समझने लगे थे। अपने अतुलित शौर्य और पराक्रम के लिए जाने जाने वाले भारतीय इस कालखण्ड में निरन्तर पराजयों के कारण इतने पस्त हो गये थे कि 1857 की व्यापक क्रान्ति के बावजूद वे अँग्रेजी सत्ता को सैनिक रूप से परास्त नहीं कर पाये। इस पस्ती से उन्हें निकालने का श्रेय गांधीजी को ही है, जिनकी निर्भयता पूरे ब्रिटिश साम्राज्य पर हावी हो गयी थी। यह भी याद रखना चाहिए कि गांधीजी के लिए अहिंसा शस्त्रों का निषेध नहीं थी, भारतीयों के शस्त्र धारण करने के अधिकार के लिए तो वे ब्रिटिश सरकार से निरन्तर लड़ते रहे। अहिंसा स्वाधीनता संग्राम के अस्त्र के रूप में स्वीकार की गयी थी और इसके बाद इसी उद्देश्य के लिए शस्त्रों का उपयोग निरर्थक हो गया था। गांधीजी अहिंसा को हिंसक तरीक़ों से ऊँचा और अधिक प्रभावी अस्त्र मानते थे। इसके अलावा वे छुटपुट हिंसा की छूट देकर स्वाधीनता आन्दोलन के अपने प्रधान अस्त्र को कमजोर नहीं कर सकते थे। यही कारण है कि उन्हें चौरी चौरा की घटना के बाद अपना आन्दोलन स्थगित करना पड़ा था। लेकिन उनकी अहिंसा का अर्थ हर हालत में शान्तिवादिता नहीं था। आत्मरक्षा तथा स्त्रियों के शील की रक्षा के लिए आवश्यक हो जाने पर वे हिंसक तरीक़ों के उपयोग की भी वकालत करते रहे। देश की सीमाओं की रक्षा के लिए सेना के उपयोग के बारे में कश्मीर पर आक्रमण के समय उन्होंने कोई दुविधा नहीं दिखायी थी।

यह कहा गया है कि गांधीजी अहिंसा का उपयोग एक धार्मिक निष्ठा के रूप में करते थे। गांधीजी ने स्वयं अनेक बार इस बात को स्पष्ट करते हुए कहा कि उनके लिए धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक विधियाँ अलग-अलग नहीं हैं। फिर भी अगर स्वाधीनता संग्राम की विधि के रूप में अहिंसा की व्याख्या करनी हो तो उन्होंने इसका उपयोग सदा एक राजनीतिक विधि के रूप में ही किया है। गांधीजी के सहयोगी उनके अनुकरण पर, बिना उसका पूरा

शक्तियों का अनौचित्य सिद्ध करते हुए उनका शमन कर सके। उनका शमन वैसी ही हिंसक शक्तियाँ पैदा करके नहीं किया जा सकता था, क्योंकि यह यूरोपीय सभ्यता के उत्कर्ष का काल था। इसलिए उनसे अधिक हिंसक शक्ति पैदा करना किसी और समाज के लिए सम्भव नहीं था। यह बात 1945 में जापान के हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम डालकर अमेरिका ने सिद्ध भी कर दी थी। इन हिंसक शक्तियों का शमन तो किसी ऐसे अस्त्र से ही हो सकता था जिसकी मानव के मूल स्वभाव में स्वीकृति हो और उसका प्रभाव हिंसा को निष्क्रिय करने वाला हो। यही कारण है कि दैव प्रेरणा से गांधीजी ने अहिंसा को भारत के स्वाधीनता संग्राम का अस्त्र बनाया। अहिंसा को स्वाधीनता संग्राम के साधन के रूप में अपनाकर गांधीजी ने असहाय और असमर्थ हुए साधारण भारतीयों को समर्थ बना दिया। अहिंसा ने उन्हें आन्तरिक शक्ति दी, नैतिक बल दिया और ब्रिटिश बर्बरता के भय से मुक्त कर दिया।

गांधी जी के अहिंसक आन्दोलन के कारण ब्रिटिश शासन वैसी क्रूरता और बर्बरता नहीं दिखा पाया जैसी उसने

आशय समझे, अहिंसा का पालन करते रहे। यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि किसी भी संग्राम में रणनीति का पूरा-पूरा ज्ञान तो सेनापति को ही होता है। गांधीजी ने अहिंसा का उपयोग किस तरह एक प्रभावी अस्त्र के रूप में किया, यह बात इसी से स्पष्ट है कि बहुत से कठोर और निर्दय समझे जाने वाले अँग्रेज प्रशासक भी उनके और उनके आन्दोलन के प्रति उतने हिंसक नहीं हो पाते थे जितने कि वे होना चाहते थे। कई गोरे प्रशासकों ने स्वयं गांधीजी से यह कहा कि वे चाहते हैं कि उनके आन्दोलन में किसी तरह हिंसा हो। क्योंकि हिंसा से वे निपटना जानते थे, अहिंसा से नहीं। एक अच्छा सेनापति वही होता है जो युद्ध में अपने अस्त्र के अनोखेपन से अपने विरोधी को चकित कर दे। यही गांधीजी कर रहे थे। इसका एक और अद्‌भुत उदाहरण मुसलमानों के सन्दर्भ में है। गांधीजी अपने सत्याग्रह के प्रस्तावों में सत्याग्रह के साथ अहिंसक विशेषण नहीं लगाते थे, क्योंकि वे यह मानकर चलते थे कि सत्याग्रह तो अहिंसक ही होगा। लेकिन जब खिलाफत आन्दोलन का प्रस्ताव बनाने का दायित्व उनके पास आया तो उन्होंने सत्याग्रह के साथ विशेष रूप से अहिंसक जुड़वाया। उन्हें मालूम था कि मौलाना इसका विरोध करेंगे। यही हुआ भी, शौकत अली और दूसरे मौलानाओं ने उसका यह कहकर विरोध किया कि इस्लाम में उचित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा का उपयोग सही ठहराया गया है। गांधीजी ने इतना ही कहा कि वे अहिंसा को एक धार्मिक निष्ठा के रूप में नहीं, समयानुकूल नीति के रूप में तो स्वीकार कर ही सकते हैं। अगर खिलाफत आन्दोलन के बाद भी गांधीजी मुसलमानों के एक बड़े वर्ग को अपने अहिंसक सत्याग्रह का अंग बनाये रख पाये होते तो हिन्दुओं से उनके अलगाव और शत्रुता के पीछे जो हिंसक आग्रह है उसका कुछ हद तक शमन हुआ होता।

एक विधि के रूप में अहिंसा का उपयोग भी भारत में सदा से होता आया है और सत्याग्रह का भी। गांधीजी ने उन्हें एक छोटे दायरे से निकालकर एक बड़े दायरे में पहुँचा दिया। अभी तक इस विधि का उपयोग व्यक्तिगत स्तर पर या किसी छोटे समूह के स्तर पर ही होता रहा था। उससे बड़े स्तर पर उसके उपयोग की पहले कभी आवश्यकता ही नहीं रही होगी। लेकिन अब राज्य की शक्ति इतनी बढ़ गयी है कि वह पूरे राष्ट्र के जीवन को प्रभावित कर सकता है। आधुनिक राज्य व्यवस्था में प्रजा पर नियन्त्रण की अनेक नयी विधियाँ आविष्कृत कर ली गयी हैं। इसलिए राज्य के अन्याय का विरोध करने के लिए भी इतनी ही प्रभावी विधि की आवश्यकता है। गांधीजी के सत्याग्रह की यह विधि अन्यायी राज्य के विरुद्ध नागरिकों के एक प्रभावी प्रतिरोध के रूप में सदा के लिए उपलब्ध हो गयी है। गांधीजी ने सत्याग्रह के द्वारा न केवल आम भारतीयों को अन्यायी ब्रिटिश शासन के विरुद्ध एक नैतिक ऊँचाई दे दी, बल्कि ब्रिटिश शासन के रहते हुए ही उसकी बेड़ियों को भी तोड़ दिया। सत्याग्रही अपने मन में स्वतन्त्र ही होता है। अगर वह सत्य के मार्ग पर है तो कोई भी सत्ता उसकी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं कर सकती। गांधीजी के लिए सत्याग्रह केवल भारत के स्वाधीनता संग्राम का अस्त्र नहीं था, वह सभ्यताओं के संग्राम का भी अस्त्र था। यूरोप ने राज्य को एक सर्वसत्तावादी स्वरूप दे दिया है और राज्य की इस सर्वग्रासी शक्ति से नागरिक को बचाने के लिए उतनी ही शक्तिशाली विधि की आवश्यकता है जो नागरिक या नागरिकों को राज्य का प्रतिकार करने में समर्थ बना सके। सत्य में निष्ठा किसी व्यक्ति या समाज में ऐसा ही सामर्थ्य और शक्ति जगा सकती है कि वह राज्य की बड़ी से बड़ी शक्ति पर भारी पड़े।

स्वाधीनता आन्दोलन की मुख्य विधि के रूप में सत्याग्रह का उपयोग सुनिश्चित कर लेने के बाद उन्होंने अपना सारा ध्यान भारतीयों की भौतिक असमर्थता दूर करने की ओर लगाया। उनका रचनात्मक आन्दोलन केवल आर्थिक और सामाजिक सुधार का ही आन्दोलन नहीं था। वे भारत को उस स्थिति पर लौटा देना चाहते थे जिस पर वह अँग्रेजों के भारत आते समय था। उस समय भारत की एक चौथाई आबादी औद्योगिक काम धन्धों में लगी हुई थी और मुसलमान शासकों से निरन्तर युद्ध और उनके अन्यायपूर्ण करभार के बावजूद भारतीय समर्थ और सम्पन्न थे। उन्होंने विजयनगर, मराठा, जाट और सिख राज्य ही नहीं खड़े किये थे, मुगल शासन को व्यवहारतः 150 वर्षों में सीमित करके दिल्ली सल्तनत को हतबल कर दिया था। गांधीजी चाहते थे कि भारत के लोग आर्थिक और सामाजिक रूप से फिर अपनी सभ्यता की परिधि में पहुँच

जाय और वहाँ से वे देशकाल के अनुरूप जो भी आवश्यक हों वैसे निर्णय लें।

यह बात गांधीजी भी देख सकते थे कि मात्र चरखा, जिसे उन्होंने स्वाधीनता आन्दोलन की धुरी बना दिया था, भारत के उत्कर्ष का आधार नहीं हो सकता। अपने भौतिक उत्कर्ष के लिए उसे मर्यादित मशीनीकरण की भी आवश्यकता होगी और अपनी भौतिक व्यवस्था की रक्षा के लिए सेना और आधुनिक अस्त्र शस्त्रों की भी आवश्यकता पड़ेगी। यह सब मशीनीकरण की विधियों को अपनाये बिना सम्भव नहीं है। पर मशीनें हमारी सभ्यता की धुरी नहीं हो सकती। वे हमारे आर्थिक जीवन के उपकरण ही हो सकती हैं। मशीनें सभ्यता की धुरी तभी होती हैं जब यूरोप की तरह यह मानकर चला जाय कि मनुष्य की इच्छाएँ अनन्त हैं, उसके सुखभोग की कामना भी अनन्त है और इसलिए उसके सुखभोग के साधनों की प्रचुरता जिन साधनों से हो सकती हो वे उसकी सभ्यता का आधार, उसकी सभ्यता की धुरी होंगे। अपने विज्ञान और प्रौद्योगिकी को यूरोप इसी रूप में श्रेष्ठ मानता है कि उससे प्रचुर भौतिक साधन प्राप्त किये जा सकते हैं। लेकिन सुखभोग भी केवल वस्तुओं के भोग में सीमित नहीं होता। वह सत्ता के अनियन्त्रित भोग का रूप भी ले सकता है। बल्कि उसका यही रूप अधिक सामने आता रहा है। यही सैन्य सत्ता को अधिक से अधिक मारक शक्ति प्रदान करने की ओर ले जाता है। यही कारण है कि यूरोप अपनी भौतिक उन्नति का पहला सोपान पूरा करते ही दो विश्वयुद्धों की ओर बढ़ गया। उसके बाद भी यूरोपीय सभ्यता की अग्रणी शक्ति अमेरिका लगभग हर समय किसी न किसी युद्ध में फँसी रही है। युद्ध मानव इतिहास का अनिवार्य अंग रहे हैं। लेकिन अब तक वे सेनाओं के बीच ही निर्णीत हो जाते थे। अब विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास ने राज्यों को यह शक्ति दे दी है कि वे पूरे समाज की ऊर्जा युद्ध तन्त्र का विकास करने और उसे सँभाले रखने में लगाते रहें। पर गांधीजी को आधुनिक मशीनों का सबसे बड़ा दोष यह दिखायी देता था कि वे मनुष्य का खिलौना नहीं है, मनुष्य उनका खिलौना हो गया है। औद्योगिक तन्त्र मनुष्य का उपयोग अपने एक पुर्जे के रूप में ही करता है। इससे मनुष्यों की अपनी बौद्धिक और नैतिक शक्ति के उपयोग की कोई सम्भावना नहीं रह जाती। मनुष्य की बौद्धिक शक्ति तो फिर भी उद्योग तन्त्र को टिकाये रखने में प्रयुक्त की जाती रहती है। पर उसकी नैतिक बुद्धि के उपयोग का तो अवसर ही नहीं निकलता। सारा तन्त्र तार्किक बुद्धि पर खड़ा है, नैतिक बुद्धि की कोई उपयोगिता नहीं छोड़ी गयी है। इसने फिलहाल तो केवल पर्यावरणीय असन्तुलन पैदा किया है। इस असन्तुलन को ठीक करने का कोई मार्ग तो स्वयं प्रकृति निकाल लेगी, जो निश्चय ही मनुष्य से अधिक समर्थ है। पर समाज में नैतिक बुद्धि का जो ह्रास हो रहा है, वह अभी तो केवल यूरोपीय मनुष्य की अनियन्त्रित प्रवृत्तियों में दिखायी देता है, जब कालान्तर में उसको मनुष्यत्व से गिराने का कारण बनेगा तब यूरोपीय समाज को अपनी महती भूल का ज्ञान होगा। गांधीजी नहीं चाहते थे कि भारत इस विवेकहीनता की ओर क़दम बढ़ाये। भारत की सभ्यता का तो आधार ही उसकी नैतिक बुद्धि रही है। उसे खोने का अर्थ अपनी सभ्यता को खो देना है। इसलिए गांधीजी यूरोप के जैसे औद्योगीकरण को राक्षसी बताते रहे और भारत के लोगों को इस पाप से दूर रहने की सीख देते रहे। मनुष्य के कौशल और मशीन के बीच सन्तुलन बैठाकर समृद्धि प्राप्त करना सदा भारत की सभ्यता का लक्ष्य रहा है। लेकिन सम्यक् ऋद्धि ही हमारे लिए समृद्धि है, उत्पादन की अनियन्त्रित होड़ नहीं। गांधीजी इस सभ्यतामूलक अर्थ में ही मशीनीकरण के विरुद्ध थे।

गांधीजी को समयानुकूल तन्त्र बनाने में भारतीयों की क्षमता पर गहरा विश्वास था। इसलिए उन्हें लगता था कि यूरोप के औद्योगिक साम्राज्य द्वारा क्षीण किये जाने से पहले भारत जिस अवस्था में था, अगर उसे फिर उस अवस्था में पहुँचा दिया जाय, तो वह अपना रास्ता स्वयं निश्चित कर लेगा। यूरोप के औद्योगीकरण का आरम्भ वस्त्र उद्योग के मशीनीकरण से हुआ था और उसी ने भारत के उद्योग-धन्धों को चौपट कर डाला था क्योंकि वस्त्र उद्योग भारत के उद्योग तन्त्र की रीढ़ था। यह काम कोई खुली प्रतियोगिता के द्वारा नहीं हुआ था। ब्रिटिश राज ने नियन्त्रणकारी प्रावधानों और नयी वित्तीय संस्थाओं की सहायता से यह काम किया था। इसलिए गांधीजी सबसे पहले भारत के वस्त्र उद्योग को फिर से खड़ा करने में लग गये और उन्होंने चरखे को अपने रचनात्मक कार्यों की ही

नहीं स्वाधीनता आन्दोलन की भी धुरी बना दिया। इसके साथ ही साथ उन्होंने दूसरे ग्रामीण उद्योग-धन्धों की ओर ध्यान दिया और ग्रामोद्योग का एक ऐसा तन्त्र खड़ा हो गया जो आम भारतीयों की क्रियाशीलता बढ़ाने में आज भी बड़े उद्योगों पर भारी है।

अपने रचनात्मक आन्दोलन के द्वारा गांधीजी ग्राम स्वराज्य स्थापित करना चाहते थे। भारत के अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों में आज भी भारत के गाँवों का कार्ल मार्क्स द्वारा उकेरा हुआ चित्र अधिक लोकप्रिय है। कार्ल मार्क्स कभी भारत नहीं आये और वे यूरोप में बैठे-बैठे भारत की घटनाओं पर प्राप्त रिपोर्टों के आधार पर टिप्पणी करते रहे। भारतीयों गाँवों को उन्होंने आत्मनिर्भर गणराज्य कहते हुए उनके जीवन को ठहरा हुआ और अपरिवर्तनशील बताया था। इसी के आधार पर जवाहरलाल नेहरू ने भारत के गाँवों को अँधेरे और अज्ञान में पड़े हुए कोने बताया था। यूरोप जो उस समय इतिहास में पहली बार अपने भौतिक पिछड़ेपन से उभरकर अपने भौतिक जीवन में तेज परिवर्तन कर रहा था, भारतीय गाँवों की इस छवि को नकारात्मक दृष्टि से ही देख सकता था। यूरोप में भारतीय गाँवों जैसे कोई गाँव नहीं थे। वहाँ कुलीन तन्त्र की जागीरें थीं जिन पर ग्रामीण लोग अर्धदास की स्थिति में खेती और दूसरे धन्धे करते थे। इसलिए कार्ल मार्क्स को यह समझ में नहीं आया कि भारत के आत्मनिर्भर गाँव बाक़ी दुनिया से कटे हुए गाँव नहीं हैं बल्कि अपनी मूल जरूरतों को स्वयं पूरा करने वाले सम्पन्न गाँव हैं और उसके साथ ही वे अपने आसपास के दूसरे गाँवों और उत्तरोत्तर पूरे भारत से सम्बन्ध जोड़े रहते हैं। अगर उनके जीवन में परिवर्तन धीमा दिखायी देता है तो उसका कारण उनका उन्नत स्वरूप रहा है। गांधीजी जानते थे कि भारत के गाँव ही भारतीय सभ्यता का आधार हो सकते हैं क्योंकि उनका सामाजिक जीवन वंश आधारित जातीय व्यवस्था को केन्द्र बनाकर खड़ा किया गया है और इसलिए उसमें बन्धुत्व की, साझे जीवन की, न्याय और नैतिकता की भावना बनी रह सकती है। भारत के गाँव जिस पंचायती व्यवस्था से अपना शासन करते रहे वह लोकतन्त्रीय जीवन की पराकाष्ठा है। कार्ल मार्क्स को यह सब बातें समझ में नहीं आ सकती थीं। इसलिए उसने भारतीय गाँवों के आत्मनिर्भर होने, गणराज्य होने, अपरिवर्तनशील दिखने का नकारात्मक अर्थ ही लिया।

गांधीजी को परम्परागत भारतीय गाँवों की स्मृति थी, इसलिए जब उन्होंने भारतीय गाँवों की तस्वीर उकेरी तो उसमें से जड़ या अँधेरे में पड़े हुए गाँव की छवि नहीं निकली बल्कि स्वराज्य के अनुशासन में रहने वाले समृद्ध गाँवों की छवि निकली। उन्होंने आत्मनिर्भरता का किताबी अर्थ नहीं लिया, उसका व्यावहारिक अर्थ ही लिया। उन्होंने बताया कि अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में आत्मनिर्भर होने के बावजूद वे अपनी और बहुत सी आवश्यकताओं के लिए अपने बाहर की दुनिया पर निर्भर रहे हैं। यह परस्पर निर्भरता है और उनकी आत्मनिर्भरता की सहायक है, उसकी विरोधी नहीं। गाँव से लगाकर राष्ट्र तक परस्पर निर्भरता का जो ढाँचा हमारे यहाँ सदा रहा है उसमें सभी इकाइयाँ एक सी गतिशीलता को प्रदर्शित करती रही है। इसलिए गाँव का जीवन ठहरा हुआ हो, इसका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उल्टे नृत्य, संगीत, चिकित्सा, विद्या और स्थापत्य आदि के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित करने वाले लोग गाँवों में ही बसे दिखायी देते हैं। यूरोप में जिस तरह सभी तरह के कौशलों और शक्ति का केन्द्र केवल नगर रहे हैं, वैसा भारत में नहीं था। भारत ने दुनिया के सबसे वैभवशाली नगर बसाये लेकिन गाँवों से उनका सम्बन्ध शोषण और नियन्त्रण का नहीं था। भारत के परम्परागत गाँवों की पूरी समझ भले ही नहीं रही हो, लेकिन भारतीय समाज की व्यवस्थाओं की मोटी जानकारी गांधीजी को थी और अपने समय के किसी

भारत के अँग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों में आज भी भारत के गाँवों का कार्ल मार्क्स द्वारा उकेरा हुआ चित्र अधिक लोकप्रिय है। कार्ल मार्क्स कभी भारत नहीं आये और वे यूरोप में बैठे-बैठे भारत की घटनाओं पर प्राप्त रिपोर्टों के आधार पर टिप्पणी करते रहे। भारतीयों गाँवों को उन्होंने आत्मनिर्भर गणराज्य कहते हुए उनके जीवन को ठहरा हुआ और अपरिवर्तनशील बताया था। इसी के आधार पर जवाहरलाल नेहरू ने भारत के गाँवों को अँधेरे...

और नेता से कहीं अधिक थी। लेकिन इन व्यवस्थाओं की विस्तृत जानकारी से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, उनके श्रेष्ठ होने में गहरा विश्वास। वह जितना गांधीजी में था, किसी दूसरे में नहीं।

गांधीजी ने भारतीय समाज की शास्त्रीय व्यवस्थाओं को यथावत् स्वीकार किया था। वे जब स्वराज्य की बात करते थे तो यह स्पष्ट कर देते थे कि स्वराज्य एक वैदिक अवधारणा है और उसे उन्होंने उसी रूप में ग्रहण किया है। यंग इण्डिया में उन्होंने लिखा–स्वराज्य एक पवित्र शब्द है। वह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ आत्मशासन और आत्मसंयम है। भारतीय सभ्यता में आत्मानुशासन को प्रधान माना गया है और बाहरी नियन्त्रण को गौण। यूरोप में मनुष्य की जो छवि ईसाई धर्म ने प्रचारित की वह स्वर्ग से पतित एक पापी व्यक्ति की छवि है जिसे ईश्वर की ओर ले जाने के लिए बाहरी नियन्त्रण की आवश्यकता होती है। राज्य और चर्च ने वहाँ सदा एक अनिवार्य नियन्त्रक संस्था की भूमिका निभायी है। भारत में मनुष्य की छवि एक विवेकशील व्यक्ति की छवि है जो उचित–अनुचित के बीच अन्तर करने में समर्थ है। जब तक वह विवेकपूर्ण आचरण करता है उसे किसी बाहरी नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं है। यह बात व्यक्ति के बारे में ही नहीं सभी सामाजिक इकाइयों के बारे में भी उतनी ही सही है। विवेकपूर्वक नियम बनाने, उन्हें लागू करने, न्याय करने और सभी सार्वजनिक दायित्वों का निर्वाह करने का काम पंचायत का है। पंचायत आत्मानुशासन की सामाजिक इकाई है, जिसका दायरा भौगोलिक भी हो सकता है, जातिगत भी और व्यवसायगत भी। इस आधार पर भारत मुख्यत: पंचायतों द्वारा अनुशासित रहा है। यह पंचायतें विधायी, कार्यकारी और न्यायिक सभी कर्तव्यों का निर्वाह करती रही हैं। यह दुनिया की सबसे सस्ती, कार्यक्षम और न्यायशील शासन प्रणाली है क्योंकि सभी सार्वजनिक कामों को कर्तव्य मानकर धर्म भावना से करने का ही उनमें विधान रहा है।

भारतीय सभ्यता में इस भौतिक जगत् को ब्रह्म का ही अंश माना गया है। ईशावास्यमिदम् सर्वं यत्किंच जगत्याम् जगत्। इस जगत् में जो कुछ भी दीख रहा है वह सब ईश से व्याप्त है। इस आधार पर जो भी मनुष्य के लिए उपादेय है, उसके भौतिक और पारमार्थिक उन्नयन का साधन है, उसे पवित्र मानकर पूज्य और रक्षणीय बना दिया गया है। इस तरह ज्ञान के वाहक ब्राह्मण ही पवित्र नहीं हैं, मनुष्य और कृषि का पोषण करने वाली गाय भी पवित्र है। अनेक जीव–जन्तु और पेड़–पौधों तथा वनस्पतियों को भी इसी श्रेणी में रख दिया गया है। सभी नदियाँ गंगा हैं और भागीरथी तो देवलोक से आयी पवित्र गंगा है ही। इस व्यवस्था में ही गोसेवा एक पवित्र कर्तव्य के रूप में विहित की गयी। चम्पारण में गांधीजी ने देखा कि गौशालाओं को कितनी निष्ठा से चलाया जाता है। उनके रचनात्मक कार्यक्रमों में चरखे के बाद गौसेवा को बहुत ऊँचा स्थान दे दिया गया। लेकिन इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मनुष्य अपनी भौतिक व्यवस्था को बनाते हुए केवल अपनी सुख–सुविधा का ध्यान न रखे। सभी की रक्षा और पालन उसका लक्ष्य होना चाहिए। यह जगत् सभी के पुरुषार्थ से चल रहा है, इसलिए अन्य सब का भाग छोड़ते हुए ही अपना भाग ग्रहण करो। ईशावास्य उपनिषद् का यह आदेश गांधीजी को इतना प्रिय था कि एक बार उन्होंने कहा कि अगर हिन्दू धर्म के सभी ग्रन्थ किसी कारण नष्ट हो जायें और अकेला यह मन्त्र बचा रहे तो इसी से भारतीय लोग अपनी सभ्यता फिर खड़ी कर लेंगे।

एक परम्परागत सनातनी की तरह गांधीजी ने वर्णाश्रम धर्म पर जोर दिया और उसे समाज के लिए आदर्श बताया। अँग्रेजी पढ़े–लिखे लोगों ने सामान्यत: वर्ण को समाज में शक्ति के स्तरीकरण के रूप में ही देखा है और उसे निम्न वर्ण के शोषण और उस पर नियन्त्रण का साधन बताया है। लेकिन पश्चिम के राजनीतिक पण्डित उसमें ठीक इससे उलटी विशेषता देखते रहे हैं। उन्होंने इंगित किया है कि वर्ण के रूप में समाज की व्यवस्था करके भारतीय मनीषियों ने ज्ञान, शौर्य और धन का तीन वर्गों में विभाजन कर दिया। अगर यह विभाजन न होता तो इन सभी से पैदा होने वाली शक्ति एक ही वर्ग के हाथ में होती और वह कहीं अधिक विपत्तिकर हो सका होता। वर्ण के रूप में की गयी इस व्यवस्था ने समाज को गतिशील रखने में भी सहायता की और विभिन्न कौशलों का परिमार्जन करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। जहाँ तक शूद्रों पर अत्याचार की बात है, इस वर्ण में परिगणित की गयी गैर–कृषक

जातियाँ अपनी-अपनी पंचायतों द्वारा रक्षित और शासित रही हैं और जिस तरह के शोषण और नियन्त्रण की बात यूरोप के सन्दर्भ में की जाती है वैसा शोषण और नियन्त्रण भारत में सम्भव नहीं था। फिर भी एक सीमा में असमानता और कमजोर वर्गों पर यदा-कदा अन्याय की घटनायें भी होती ही रही हैं लेकिन उनका परिमाण दूसरे समाजों और सभ्यताओं की तुलना में न्यून ही बैठेगा। गांधीजी वर्ण को सत्य, बल और भौतिक साधनों की पीढ़ी दर पीढ़ी ऊँची दक्षता पैदा करने और अपने ही कौशल की रक्षा और अभिवृद्धि में अपना गौरव देखने का साधन समझते थे। गांधीजी जाति और वर्ण में आत्यन्तिक सम्बन्ध देखते थे और वर्ण को जाति का शास्त्रीय रूप बताते थे। क्योंकि जाति वंश आधारित एक ऐसा संगठन है जो समाज में बन्धुत्व की भावना बनाये रखने और नैतिक नियमों की रक्षा करने में अग्रणी रहा है। इसके अतिरिक्त भारतीय सभ्यता में वर्ण व्यवस्था की नहीं वर्ण धर्मों की बात ही कही गयी है जिसका अर्थ है कि अपने वर्ण के धर्म का पालन करने में गौरव देखना।

गांधीजी स्वतन्त्र भारत के राजनैतिक ढाँचे के बारे में अधिक कुछ नहीं कह पाये थे। अधिकांश समय वे राम राज्य के आदर्श की बात करते हुए न्यायशील और मर्यादित व्यवस्था खड़ी करने का सपना देखते रहे। काँग्रेस के सभी नेता ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था से अभिभूत थे जबकि गांधीजी ने ब्रिटेन की संसद को वेश्या और बाँझ कहकर उसका तिरस्कार किया था। उसका कारण यह था कि ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था में धर्म बुद्धि से निर्णय करने की कोई गुंजाइश ही नहीं है। पर यह केवल ब्रिटेन की संसद का दोष नहीं है, यह तो यूरोपीय स्वभाव का दोष है जो राजनीति का आधार सत्ता हथियाने के लिए की जाने वाली प्रतिस्पर्धा को मानता है और राजनीति में धर्म बुद्धि का उपयोग करने की कल्पना भी नहीं कर पाता। राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान ऐसे बहुत से अँग्रेज प्रशासक थे जो गांधीजी के जीवन से बहुत प्रभावित थे। लेकिन वे अपना यह आश्चर्य नहीं छिपा पाते थे कि राजनीति में धार्मिक विधियों का उपयोग कैसे किया जा सकता है। ब्रिटेन की संसद पर इतनी तीखी टिप्पणी गांधीजी ने मुख्यत: दो कारणों से की थी। एक तो ब्रिटिश संसद को यूरोपीय सभ्यता के श्रेष्ठ होने का मानक बना दिया गया था। गांधीजी सीधे उसके इस मानक पर ही प्रहार करना चाहते थे ताकि यूरोपीय सभ्यता की श्रेष्ठता के दावे को निरस्त किया जा सके। दूसरे वे भारतीय नेताओं को जो ब्रिटेन की संसद में आदर्श राजनीतिक व्यवस्था देखते थे, उनके इस मोह से अलग करना चाहते थे। इसके बिना भारतीय नेता स्वराज्य की अवधारणा को समझ ही नहीं सकते थे। लेकिन काँग्रेस के नेताओं में यूरोपीय सभ्यता को लेकर जो मोह उत्पन्न हो गया था उसे गांधीजी अपने जीवित रहते समाप्त नहीं कर पाये और स्वतन्त्र भारत के लिए काँग्रेस ने वही प्रणाली चुनी जिसका इतना तिरस्कार गांधीजी ने हिन्द स्वराज में किया था।

गांधीजी शासन की लोकतान्त्रिक पद्धति के विरुद्ध नहीं थे। जब उन्होंने काँग्रेस की कमान सँभाली तो सबसे पहले उन्होंने उसे एक लोकतान्त्रिक संस्था बनाया। सभी स्तरों पर उसके पदाधिकारियों और समितियों का चुनाव आवश्यक कर दिया गया। इसी तरह अपने पहले सत्याग्रह में ही अपना रचनात्मक कार्यक्रम बताते हुए उन्होंने पंचायतों की स्थापना को विशेष महत्त्व दिया था। भारत की पंचायतें तो लोकतन्त्रीय शासन की पराकाष्ठा ही रही हैं क्योंकि वे धर्मबुद्धि और लोकमत दोनों का समावेश करके चलती हैं। लेकिन गांधीजी यह भी जानते थे कि यूरोप ने बड़े पैमाने के तन्त्र खड़े करने की विवशता पैदा कर दी है। आधुनिक उद्योग भी कुछ क्षेत्रों में अपरिहार्य हो गये हैं। गांधीजी किसी भी बड़े तन्त्र को सार्वजनिक स्वामित्व में रखने के पक्षधर थे। पर इसका अर्थ यह हुआ कि राज्य को जितनी सीमित भूमिका वे देना चाहते थे, उससे बड़ी भूमिका उसे देना आवश्यक होगा। लेकिन यह सब व्यावहारिक प्रश्न हैं। गांधीजी निश्चय ही भारत में राज्य को वैसी केन्द्रीय भूमिका देने पर सहमत नहीं हो सकते थे जैसी उसे यूरोपीय समाज में मिली हुई है। ऐसा करना भारत के लोगों के स्वभाव और संस्कार के विरुद्ध ही है।

गांधीजी यह भी नहीं चाहते थे कि भारत के लोगों का वैसा राजनीतिकरण हो जाय जैसा यूरोपीय लोगों का हो गया है। यह स्वाभाविक ही है कि ऐसा होने पर लोगों के सामाजिक धर्म गौण हो जाते हैं। भारत के लोगों के सार्वजनिक जीवन को वे कर्तव्यों के आधार पर ही

अनुशासित करना चाहते थे और उनकी मान्यता थी कि कर्तव्यों के द्वारा अधिकारों की प्राप्ति की जा सकती है न कि अधिकारों के आधार पर कर्तव्यों का निर्धारण। अधिकार प्रमुख तभी होते हैं जब सारी सत्ता राज्य के पास चली जाय और फिर उससे अधिकार प्राप्त किये जायें। आधुनिक राज्य ने सारे दायित्व अपने ऊपर ले लिए हैं और लोगों की कर्तव्य भावना क्षीण कर दी गयी है। लोग अपने सुख के लिए ही जीते हैं और समाज एक ऐसे जनसमूह में बदल गया है जिसके आपसी सम्बन्ध गौण हो गये हैं और उनका जीवन राज्याश्रित या राज्यनियन्त्रित होता चला जा रहा है। गांधीजी भारतीय समाज को कर्तव्यों की परिधि में ही बनाये रखना चाहते थे। अपने परिवार, जाति, ग्राम, जनपद, देश, पशु, वनस्पति, जल, वायु, भूगोल सबके प्रति हमारे कर्तव्य हैं। उन कर्तव्यों का भान हमें सदा बना रहे और इन कर्तव्यों के निर्वाह को ही हम अपने जीवन का लक्ष्य समझें, यही गांधीजी का प्रेय था।

पिछले साठ वर्षों में बहुत से लोगों ने गांधीजी के विचारों में से आर्थिक विकास की रणनीति तलाशने का प्रयत्न किया है और उनके रचनात्मक कार्यक्रम को ग्रामीण विकास की एक पद्धति के रूप में देखा है। गांधीजी गाँवों के उत्थान के लिए जो भी प्रयत्न कर रहे थे वे केवल उनके आर्थिक विकास तक सीमित नहीं थे और वैसे भी उनका उद्देश्य ग्रामीण विकास नहीं ग्राम स्वराज्य था। ग्राम स्वराज्य गाँवों की ही नहीं पूरे देश के स्वराज्य की एक व्यवस्था है जिसके केन्द्र में गाँव हैं। कुछ लोगों ने गांधीजी को एक नये वाद का जनक ही कह दिया है। इस तरह की व्याख्याएँ भक्त और प्रशंसक करते ही रहते हैं। लेकिन गांधीजी ने एक भी ऐसी बात नहीं कही जो भारतीय सभ्यता में सदा से कही या की न जाती रही हो। वे भारतीय सभ्यता की पुनर्व्याख्या भी नहीं कर रहे थे। वे तो एक श्रद्धावान पुरुष की तरह भारतीय सभ्यता की सभी मान्यताओं का व्याख्यान ही कर रहे थे। उन्होंने अपने समय के दूसरे लोगों से अलग बहुत सी बातें कही हैं। पर वे अलग इसलिए लगती हैं कि अन्य लोग अपनी सभ्यता की विधियों को भूल गये थे। वे इसलिए अलग नहीं थीं कि वे गांधीजी की कोई मौलिक स्थापनायें थीं। गांधीजी ने ऐसा कुछ नहीं कहा है जो भारत में सदा से ज्ञात न रहा हो। लेकिन जो कुछ उन्होंने कहा उसके पीछे उनकी निष्ठा थी, उनकी तपस्या थी और उनका यह विश्वास था कि भारत के लोग चाहे अभी कितना ही भटक गये हों, वे अपने इस सिद्ध मार्ग की ओर लौटेंगे और फिर से विश्व की सबसे विलक्षण सभ्यता बनायेंगे जो धर्म-प्रसूत हो। इसलिए भारत के भविष्य को वे किस रूप में देखते थे, इसका उत्तर हमें अपनी सभ्यता को समझकर देश को उस दिशा में आगे बढ़ाते हुए ही मिल सकता है।

गांधीजी का महत्त्व यह है कि जब हमारे सार्वजनिक जीवन के अधिकांश अग्रणी नेता आत्मविस्मृत हुए पड़े थे, यूरोपीय विचारों और संस्थाओं से अभिभूत होकर अपने मार्ग से भटक गये थे, उन्होंने देश को उसके अपने धर्म का स्मरण करवाया। यह स्थिति आती रहती है, जब काल के प्रभाव में लोग सनातन धर्म का मार्ग भूल जाते हैं। ऐसे समय कोई न कोई महापुरुष पैदा होता है और वह धर्म-चक्र का प्रवर्तन करता है। यह आवश्यक नहीं कि उसके जीवन काल में ही उसके दिखाये मार्ग पर लोग चलने लगें। ऐसा शायद ही कभी हो पाया हो। लेकिन उसके जीवन और कर्म के प्रभाव से काल का चक्र घूमता है और भारत के लोग अपनी सभ्यता के दायरे में लौट आते हैं। गांधीजी ने अपना काम कर दिया। हमें अपने उस मार्ग का स्मरण करवा दिया जो हमारा चिर परिचित मार्ग है, सिद्ध मार्ग है। गांधीजी को पूरा विश्वास था कि अपने इस मार्ग पर भारत लौट आयेगा। देश-काल बदलता है। अभी भी बदल रहा है और आने वाले समय में और भी बदलेगा। देश-काल में परिवर्तन के साथ हमें अपनी सभ्यता की विधियों में कुछ परिवर्तन करने होते हैं। भारत के लोग इतने कुशल हैं कि वे देश-काल को समझकर अपनी विधियों को उसके अनुरूप ढाल लें। अगर आज हमें अपने वर्तमान से इसकी कोई झलक नहीं मिलती तो बहुत निराश होने की आवश्यकता नहीं है। काल की अवधि लम्बी होती है। हमारे वर्तमान का दायरा छोटा है। हमें इस लम्बी अवधि के अनुरूप पुरुषार्थ में लगे रहना है। ठीक उसी तरह जैसे गांधीजी अपने पुरुषार्थ में लगे रहे थे। भले वे वह सब कुछ प्राप्त न कर पाये हों जिसे लक्ष्य बनाकर वे चले थे। पर उनके छूटे हुए काम हमारा दाय हैं। उन्हें पूरा करना हमारा दायित्व है।

(लेखक गांधीवादी विचारक एवं पत्रकार हैं)

खादी, क्या इतिहास बन रही है...

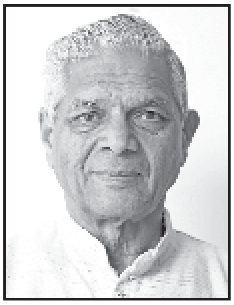

लक्ष्मीदास

यह शीर्षक मुझे नहीं देना चाहिए था। क्योंकि यह शीर्षक खादी के भविष्य के हित में नहीं है। हो सकता है खादी की दुकान चलाने वालो को मेरी यह बात ठीक न लगे। यह भी संभव है कि इस शीर्षक पर मेरी आलोचना हो। लेकिन मैं क्या करूं? मुझे खादी से प्यार है, मैं खादी का भक्त हूं। मैं खादी को इस देश में, नए अर्थतन्त्र, जिसकी इस देश को आवश्यकता है, कि क्रान्तिकारी माध्यम मानता हूं। इस खादी की आज की स्थिति देख कर मुझे मानसिक पीड़ा होती है। इसलिए यह शीर्षक दे दिया। मैं चाहता हूं और प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि मेरा यह शीर्षक गलत हो। लेकिन आज जो खादी की स्थिति है। उसमें किसी को भी यदि मेरा यह शीर्षक शतप्रतिशत गलत लगे तो मैं उन महानुभाव से, किसी भी मंच पर, किसी भी समय, किसी की भी उपस्थिति में, चर्चा करने के लिए तैयार हूं। क्योंकि मैं चाहता हूं कि मेरा यह शीर्षक गलत प्रमाणित हो।

मैं यह दावा करता हूं कि खादी यदि इतिहास बन गई है या बन रही है तो भी वह एक स्वर्णिय इतिहास है। जिसकी चमक, भविष्य में, अधिक मुखर होकर सामने आएगी। खादी एक विचार है, खादी एक कपड़ा है, खादी एक दर्शन शास्त्र है। खादी सन्तुलित आर्थिक विकास का मूल मन्त्र है, खादी एक क्रान्तिकारी अर्थ नीति का आधार है।

मेरी समझ के अनुसार गांधी जी जब भारत में आए और श्री गोपाल कृष्ण गोखले के कहने पर देश भर में, एक वर्ष घूमे तो उन्हें यह तो समझ में आ गया कि यह देश भयंकर गरीबी की लपेट में हैं, जिसका मुख्य कारण, अंग्रेजों ने, इस देश को हमेशा हमेशा के लिए गुलाम बनाए रखने के लिए, इस देश के ग्रामीण अर्थतन्त्र को कुशलतापूर्वक तोड़ा है। अब प्रश्न था कि उस आत्म निर्भर बनाने वाले अर्थतन्त्र को पुनः स्थापित कैसे किया जाए ? एक मुद्दा तो उनकी समझ में आया कि यह सब देश की गुलामी के कारण हुआ है, इसलिए देश को आजाद करवाना आवश्यक है। लेकिन इतने मजबूत शासन तन्त्र को चुनौति कैसे दी जाए ? मेरी समझ के अनुसार, गांधी जी की समझ में यह भी आ गया था कि जिस तरह अंग्रेजों ने भारत के अर्थतन्त्र को तोड़कर ब्रिटेन को मजबूत किया है। उसी अर्थतन्त्र को बहाल किया जाए तो अंग्रेजों को चुनौती दी जा सकती है परन्तु कैसे ? इसी 'कैसे' की खोज में गांधी जी के हाथ टूटा फूटा एक चर्खा लगा। इसी पर गांधी जी

मैं यह दावा करता हूं कि खादी यदि इतिहास बन गई है या बन रही है तो भी वह एक स्वर्णिय इतिहास है। जिसकी चमक, भविष्य में, अधिक मुखर होकर सामने आएगी। खादी एक विचार है, खादी एक कपड़ा है, खादी एक दर्शन शास्त्र है। खादी सन्तुलित आर्थिक विकास का मूल मन्त्र है, खादी एक क्रान्तिकारी अर्थ नीति का आधार है।

ने खादी रूपी शस्त्र का महल खड़ा किया और देश को आत्मनिर्भर बनाने वाले अर्थतन्त्र को पुनर्जीवित करने की शुरूआत की। इसी में स्वदेशी की बात आई। इसी में विदेशी कपड़े की होली जलाने वाली बात आई। इस टूटे-फूटे चर्खे को आधार बनाकर गांधी जी ने, अंग्रेजी सल्तनत के अर्थतन्त्र को चुनौती दी, अंग्रेज उसका मुकाबला नहीं कर सका चर्खा हमारी शान बन गया। चर्खा स्वतन्त्रता सेनानियों का अहिंसक हथियार बन गया। खादी स्वतन्त्रता सेनानियों की पहचान बन गई । देश भर में चर्खे और खादी के गीत गाए जाने लगे। यहां गांधी को दकियानुसी कहने वालो की जानकारी मैं बता दूं कि संभवत 1925 में गांधी जी ने घोषणा की थी कि यदि कोई वैज्ञानिक इस चर्खे में कोई ऐसी तकनीक जोड़ दें, जिससे इस चर्खे पर लगने वाला श्रम कम हो जाए। कम श्रम में भी उत्पादन अधिक हो जाए और इस चर्खे पर काम करने वाले की आय बढ़ जाए तो मैं उस इन्जीनियर को एक लाख रूपया इनाम दूंगा। 1925 में ऐसा आह्वान करने वाला विचारक आधुनिकता के विरूद्ध नहीं हो सकता। लेकिन यह आज तक नहीं हो पाया। कालान्तर में प्रयास अवश्य हुए। लेकिन चर्खे को तकनीक नहीं मिली। अम्बर चर्खे के रूप में मिल का एक छोटा रूप, खादी वालों को मिल गया। जिस पर खादी वालों ने बहुत गीत गाए। धीरे-धीरे अम्बर चर्खे का बोलबाला हो गया। परम्परागत खादी पार्श्व में जानी शुरू हो गई। आज शायद लुप्त हो गई होगी। किसी वैज्ञानिक ने अम्बर चर्खे के रूप में एक मिल खादी वालों के हाथ में पकड़ा दी। उसमें शर्त भी लगा दी कि यह मिल हमने आपको दी है लेकिन इसमें कानूनन आप बिजली इस्तेमाल नहीं कर सकते अर्थात इस मिल से निकला हुआ सूत हाथ कता ही होगा। यह मिल किसी वैज्ञानिक ने कतिन को दे दी और इस चर्खे को बिजली लगाने का गैर कानूनी कार्य कतिन ने खुद कर लिया। मैं नहीं जानता कि आज कितने अम्बर चर्खे और कितनी खड्डियां इस देश में बिना बिजली के चल रही हैं।

जब खादी काम आगे बढ़ा तो गांधी जी ने खादी के लिए कॉस्ट चार्ट की व्यवस्था की। कॉस्ट चार्ट का अर्थ है कि खादी बनाने पर जो खर्च आएगा उसका पूरा ब्योरा तैयार करके उसी भाव खादी बेची जाएगी। इसे प्रमाणित खादी कहा गया। शुद्ध खादी और प्रमाणित खादी में फर्क यह था कि शुद्ध खादी में लाभांश हो सकता था लेकिन प्रमाणित खादी में लाभांश की कोई संभावना ही नहीं थी। पूरी पारदर्शिता। सबके सामने, खुले में बैठकर कॉस्ट चार्ट पर चर्चा होती। खुले में यह कॉस्ट चार्ट बनता और सब मिलकर इसे पास करते। यह व्यवस्था बहुत सुन्दर तरीके से चल रही थी। बाद में जब खादी कमीशन बन गया तो इस कॉस्ट चार्ट को खादी कमीशन से भी स्वीकृति की जाने लगी। गांधी जी का बिना लाभ हानि के काम करने वाला यह प्रमाणित और पारदर्शी व्यापार था। खर्चों के आधार पर कीमत तय हो जाती और जो कीमत तय होती इसी पर खादी बिकती थी और खूब बिकती थी। इसमें किसी का कोई शोषण नहीं । कतिन, बुनकर, कारीगर तो शोषण नहीं ही, ग्राहक का भी शोषण नहीं। सबके हितो की रक्षा की जाती थी। किसी का कोई शोषण नहीं। शोषण और लाभांश मुक्त व्यापार। फिर एक समय आया जब हाथकता हाथ बुना होने के कारण खादी उत्पाद महंगे दिखाई देने लगे तो सरकार ने ग्राहक को खादी खरीदने के लिए प्रोत्साहन हेतु खादी पर, खादी रिबेट की घोषणा की। खादी का यह कार्य पारदर्शी और निर्वाधगति से चल रहा था। फिर जहां गुड़ होता है वहां मक्खियां आ ही जाती हैं। पहले इक्का-दुक्का मक्खी आई फिर धीरे-धीरे ऐसा लगने लगा कि सब तरफ मक्खियां ही मक्खियां हैं तो एक दिन आया जब सारी व्यवस्था ही बदल गई। अब मैं नहीं कह सकता कि गांधी जी द्वारा कॉस्ट चार्ट है या नहीं। कारीगर का शोषण हो रहा है या नहीं बल्कि कारीगर है या नहीं बल्कि बिना बिजली के चर्खा, करघा है या नहीं। मैं गांधी जी द्वारा सुझाए गए कॉस्ट चार्ट की पारदर्शिता और क्रांतिकारी स्वरूप को जानता हूं। मैं शोषण मुक्त कारीगर व्यवस्था जिसकी गांधी जी ने वकालत के उसका स्वरूप जानता हूं। मैं खादी का क्रांतिकारी सन्देश जानता हूं। वह सब आज है या नहीं इस बारे में मैं कुछ नहीं जानता। इसलिए कुछ कहना भी कठिन है।

संभवत: 1988 की बात है मैंने आह्वान किया था कि एक मीटर खादी खरीदो और एक करोड़ लोगों को रोजगार दो। इसके पीछे मेरे पास एक मजबूत आधार था। उस समय, देश में, 12 करोड़ मीटर खादी का उत्पादन होता था और 14 लाख कारीगरों को रोजगार मिलता था।

उस समय देश की लगभग 100 करोड़ आबादी थी। मेरा तर्क था कि यदि हर व्यक्ति एक मीटर खादी खदीदता है तो हमें 100 करोड़ मीटर खादी की आवश्यकता होगी। यदि 12 करोड़ मीटर के उत्पादन से हम 14 लाख कारिगरों को काम दे रहे हैं तो 100 करोड़ के उत्पादन से लगभग एक करोड़ कारीगरों को रोजगार मिलेगा। यह सब लगभग-लगभग ही था। तब मेरे इस आह्वान पर मेरी आलोचना भी हुई। यह आलोचना कि जाने लगी कि खादी तो एक विचार है। गांधी जी ने कहा है कि 'खादी एक विचार है' तो इस विचार को रोजगार के साथ जोड़कर खादी के साथ अन्याय किया जा रहा है। मेरे आलोचक सही भी हो सकते हैं। मैं उन्हें कुछ नहीं कहता। लेकिन यह बात सत्य है कि मैंने खादी ग्रामोद्योगों को रोजगार के साथ जोड़ा। मेरा ऐसा मानना है कि रोजगार और स्वरोजगार जैसी योजनाओं की इस देश को आवश्यकता है। मैं इस कथन को सही मानता हूं कि यदि हम किसी को रोटी देते है तो उसे एक दिन का खाना देते हैं यदि परन्तु यदि रोटी कमाना सिखा देते है तो न केवल जीवन पर्यन्त बल्कि पीढ़ी दर पीढ़ी उसे रोटी उपलब्ध करवा देते हैं। इसी दृष्टि से मैं खादी ग्रामोद्योगो को रोटी कमाने के साधन के रूप में देखता हूं। मैं खादी और ग्रामोद्योगों को उधमिता विकास के मुख्य आधार के रूप में देखता हूं। मैं खादी ग्रामोद्योगों को आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का क्रान्तिकारी माध्यम मानता हूं। मैं नहीं जानता कि आज की स्थिति क्या है। मैं यह भी नहीं कह सकता कि कितने खादी भक्त या खादी नेता या गांधी वादी या गांधी विचारक मेरी इस सोच से सहमत है। लेकिन मेरे लिए रोजगार एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। रोजगार या स्वरोजगार यह बेरोजगार के जीवन की आवश्यकता है। इसलिए यदि खादी ग्रामोद्योग दोनों मिलकर रोजगार की संभॉवनाएं सृजित करते हैं तो मैं खादी और ग्रामोद्योगों को बेरोजगार का सहारा और अर्थव्यवस्था का आधार मानता हूं। खादी एक विचार है, यह मैं अवश्य मानता हूं। लेकिन मेरे सामने रोटी का भी प्रश्न है। मैं किसी बेरोजगार या गरीब को यह कहकर कि खादी एक विचार है आप इसे रोज पढ़ा करो इसका रोज चिन्तन मनन किया करो। मैं किसी बेरोजगार या गरीब का मजाक नहीं उड़ा सकता। 'खादी एक विचार है।' इसे मैं इस रूप में देखता हूं कि खादी ग्रामोद्योग विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था का मुख्य आधार है जबकि विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था इस देश की मुख्य आवश्यकता। गांधी जी ने इसीलिए कहा होगा कि खादी को केवल कपड़ा मत मानो, यह तो विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था का प्रतीक है। इसलिए मैं खादी को रोजगार सृजन के साथ जोड़ना आवश्यक मानता हूं और मैंने खादी को रोजगार सृजन के साथ जोड़कर देखा है। उसी की वकालत भी की है।

बहुत लोगों को लगता है कि खादी नर्म होनी चाहिए। पतली होनी चाहिए, मुलायम होनी चाहिए। फैशनेबल होनी चाहिए। मैंने जब पहली बार खादी जगत में मुम्बई के नेहरू प्लेनीटोरियम में, श्रीमती जया बच्चन और श्रीमति भोजवानी के साथ मिलकर खादी के फैशन शो का आयोजन किया तो इसकी भरपूर तारीफ हुई थी लेकिन आलोचना भी हुई थी।

गांधी जी ने कहा है कि 'खादी एक विचार है' तो इस विचार को रोजगार के साथ जोड़कर खादी के साथ अन्याय किया जा रहा है। मेरे आलोचक सही भी हो सकते हैं। मैं उन्हें कुछ नहीं कहता। लेकिन यह बात सत्य है कि मैंने खादी ग्रामोद्योगों को रोजगार के साथ जोड़ा। मेरा ऐसा मानना है कि रोजगार और स्वरोजगार जैसी योजनाओं की इस देश को आवश्यकता है।

मैं यहां उस फैशन शो की तारीफ या आलोचना पर चर्चा नहीं कर रहा । यह तो मात्र प्रसगंवश आ गया। मैं तो इतना ही कहना चाहता हूं कि फैशन शो की व्यवस्था करने वालों से मैंने निवेदन किया कि इस फैशन शो में साड़ी का ऐसा सुन्दर प्रदर्शन कीजिए कि आज जो साड़ी पांच मीटर की है उसकी जगह छः मीटर साड़ी की मांग खड़ी हो। ताकि हर साड़ी में मेरी, एक मीटर खादी की अधिक बिक्री हो। मैं यह कहना चाहता हूं कि खादी बहुत सुन्दर है। लेकिन यह सुन्दरता उसकी अपनी किस्म की है। मैं खादी की सुन्दरता का पूजक हूं। खादी को मिल जैसा सुन्दर बनाने की न मेरी कभी कल्पना थी और मैंने कभी वैसा सोचा ही नहीं। खादी की सुन्दरता को परखना होगा। वह मोटी है, खुरदरी है, कहीं-कहीं ऊबड़ खाबड़ है आदि आदि। इसमें यदि कहीं सुधार की आवश्यकता है तो उसमें जो सुधार करना हो वह अवश्य करना चाहिए। लेकिन पता नहीं कैसे खादी को मिल जैसा सुन्दर बनाने की होड़ सी लग गई है इसका

परिणाम यह हुआ कि खादी की अपनी सुन्दरता कहीं खो गई है। इसका परिणाम हुआ है कि पहनने वालों ने सोचा कि जब हमको मिल जैसी खादी ही पहननी है तो फिर खादी क्यों मिल का कपड़ा क्यों नहीं। खादी में भी कई काली भेड़ों ने मिल का ही कपड़ा खादी में घुसा दिया। इस तरह की सोच और व्यवस्था ने खादी को बहुत कमजोर किया है।

खादी का उत्पादन ही रोजगार या स्वरोजगार पैदा करता है। उत्पादन के लिए पूंजी चाहिए। वह आज खादी संस्थाओं के पास नहीं। हमें यह समझना चाहिए कि खादी का उत्पादन खादी संस्थाओं के माध्यम से ही होता है। एक समय था। जब हर वर्ष खादी के काम का लेखा-जोखा होता था। उसी को ध्यान में रखकर खादी संस्थाओं की, वित्त की आवश्यकता निर्धारित होती थी उसी पात्रता अनुसार संस्थाओं को हर वर्ष धन उपलब्ध करवाया जाता था। इस तरह खादी का टिकाऊ विकास होता था। धीरे-धीरे इस वित्त व्यवस्था में बैंक वित्त को जोड़ा गया। बैंक वित्त में ब्याज अनुदान सरकार देती थी लेकिन कुछ अंश संस्थाओं को भी वहन करना पड़ता था जिसका प्रावधान भी कॉस्ट चार्ट में जोड़ा गया। लेकिन इस व्यवस्था ने धीरे-धीरे खादी संस्थाओं को कमजोर करना शुरू किया। कैसे ? यह लम्बे विश्लेषण का विषय है। इस लेख में नहीं समा सकता। खादी संस्थाओं में अनेक कारणों से सतत् पूँजी क्षरण हुआ। जब तक इसकी भरपाई होती रही तब तक तो इस समस्या की ओर ध्यान नहीं गया। जब कभी किसी ने इस पूँजी क्षरण की ओर ध्यान आकर्षित किया भी तो उसे अनदेखा अनसुना कर दिया। इस तरह यह पूँजी क्षरण लगातार जारी रहा। आज बहुतायत संस्थाओं की पूँजी समाप्त हो चुकी है। जिनके पास है भी वह स्टाक के रूप में है। तरल पूंजि का नितान्त अभाव है। इस तरल पूँजी के अभाव में खादी उत्पान अत्यन्त कठिन है। चाहे जितने मर्जी चर्खे और करघे संस्थाओं को उपलब्ध करवा दिए जाएं जब तक कच्चा माल खरीदने के लिए तरल पूँजी नहीं होगी तब तक खादी उत्पादन को चलाया नहीं जा सकता। चर्खा, स्वयं में रोजगार नहीं देता। चर्खे को रूई चाहिए और उस रूई को कातने वाला या वाली कारीगर चाहिए। आज कारीगर का भी अभाव हो रहा है। फिर भी कारीगर हैं भी तो रूई नहीं है। इस रूई के अभाव में चर्खे बन्द पड़े हैं। सभी बन्द पड़े है ऐसा मैं नहीं कहता। कहीं-कही चल भी रहें हैं। परन्तु बन्द पड़े चर्खो की भी संख्या कम नहीं है। संस्थाओं की तरल पूंजी की आवश्यकता को समझना पड़ेगा। समझ बूझ कर पूरे विश्लेषण और पूंजी संरक्षण तथा पूँजी विकास के नियमों को ध्यान में रखकर आर्थिक व्यवस्था आवश्यक है। वरना धीरे-धीरे पूंजी क्षरण होता रहेगा। नई पूंजी मिलेगी नहीं यदि मिली भी तो वह चल रही व्यवस्था में ही घुस जाएगी। तरलता बनेगी नहीं। व्यवस्थापक-स्टाक बेच बेच कर खर्चे निकालते रहेंगे। धीरे-धीरे स्टाक भी समाप्त हो जाएगा। फिर तो मात्र स्वर्णिम इतिहास ही हमारे पास बचेगा। समय है चेतने का। दोष देने का नहीं। खादी के टिकाऊ विस्तार पर नए सिरे से सोचना चाहिए। योजना बनानी चाहिए और खादी को एक नई उड़ान देनी चाहिए।

मैं जब इतना लिख रहा हूं तो मुझे इस बात का अहसास है कि तरल पूँजी समाप्त हो चुकी है। स्टाक भी समाप्त हो जाएगा। फिर भी संस्थाओं के पास अचल सम्पत्ति है। यह अचल सम्पत्ति एक बहुत बड़ा सहारा है। संस्थाओं का इसका उपयोग करना चाहिए। मैं इस अचल सम्पत्ति बेचने की बात नहीं कर रहा क्योंकि जब एक बार सम्पत्ति बेचने की स्वीकृति मिली तो फिर तो कुछ शेष बचेगा ही नहीं इसलिए मैं खादी संस्थाओं की सम्पत्ति को बेचने का विरोधी हूं। लेकिन उस अचल सम्पत्ति को आधार मानकर, योजना बनाकर, योजनाबद्ध तरीके से बैंक से वित्त जुटाया जा सकता है। यह कोई कोरी कल्पना नहीं है। संस्थाओं के प्रतिनिधियों के साथ बैठकर माथा-पच्ची करनी चाहिए। रास्ता निकल आएगा। खादी बच जाएगी। न केवल बच जाएगी बल्कि नई उड़ान के साथ गांधी की खादी, सुन्दर खादी, खादी का फैशन, टिकाऊ रोजगार देने वाले खादी ग्रामोद्योग, आत्म निर्भर खादी, आत्म निर्भरता को बढ़ाना देने वाली खादी ग्रामीण आधारित आत्म निर्भरता प्रदान करने वाली खादी, भविष्य की अर्थ रचना रचने वाली क्रान्तिकारी विचार से ओतप्रोत खादी हमारे सामने होगी। थोड़ी हिम्मत की आवश्यकता है।

(लेखक वरिष्ठ गांधीवादी विचारक, चिंतक और खादी कार्यकर्ता हैं।)

•

पर्यावरण संरक्षण व जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय राजनीति का प्रभाव

आनंद सौरव

हर वर्ष की तरह एक बार फिर पूरे मानव समुदाय ने पांच जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया। इसे संयोग कहें या प्रकृति की चेतावनी कि यह वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस मनाने का 51वां वर्ष है, वहीं पहली बार राष्ट्रीय राजधानी में तापमान 52 डिग्री सेल्सियस को भी पार कर गया। देश के कम से कम 40 शहरों में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा जा पहुंचा। भीषण गर्मी और लू की चपेट में आने से सैकड़ों लोगों की मौत हो गयी। जहां एक और ओर इस भीषण गर्मी से लोग त्राहिमाम कर रहे हैं वही भारत के पूर्वी तटों पर रेमल तूफान ने उधम मचा दिया। इस चक्रवात से कई लोगों की जानें गई, वहीं पूर्वोत्तर के कई हिस्सों को बाढ़ का सामना करना पड़ा। जलवायु परिवर्तन की इस त्रासद पृष्ठभूमि में हमनें इस वर्ष अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण दिवस मनाया, जो हमें इस बात का मौका देता है कि हम आत्मावलोकन कर सके कि हम कितनी निष्ठा और ईमानदारी से प्रकृति और पर्यावरण के संरक्षण, और जलवायु परिवर्तन को लेकर संकल्पित है।

विश्व पर्यावरण दिवस का इतिहास

क्या इतिहास रहा है विश्व पर्यावरण दिवस का? पर्यावरण के लिहाज से 1972 का साल मानव जाति के लिए बहुत अहम था। इस वर्ष पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्वीडन के स्टॉकहोम में पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन के दौरान ही संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) की भी नींव पड़ी थी। इसमें 119 देशों ने भाग लिया। भारत ने भी इस अहम सम्मलेन में हिस्सा लिया। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 'पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति एवं उसका विश्व के भविष्य पर प्रभाव' विषय पर प्रभावी व्याख्यान दिया, और देश के विजन को अंतरराष्ट्रीय समुदाय के समक्ष रखा। इसी सम्मेलन में 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में नामित किया गया और पहली बार 1973 में "केवल एक पृथ्वी" के नारे के तहत पहला पर्यावरण दिवस मनाया गया। और इस तरह पिछले 51 वर्षों में यह दिवस पर्यावरण के प्रति जागरूकता और क्रियाशीलता के लिए दुनिया भर के करोड़ों लोगों को एकजुट करने का मंच बन गया है।

देश के कम से कम 40 शहरों में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा जा पहुंचा। भीषण गर्मी और लू की चपेट में आने से सैकड़ों लोगों की मौत हो गयी। जहां एक और ओर इस भीषण गर्मी से लोग त्राहिमाम कर रहे हैं वही भारत के पूर्वी तटों पर रेमल तूफान ने उधम मचा दिया। इस चक्रवात से कई लोगों की जानें गई, वहीं पूर्वोत्तर के कई हिस्सों को बाढ़ का सामना करना पड़ा।

पर्यावरण संरक्षण, जलवायु परिवर्तन और अंतरराष्ट्रीय राजनीति

पिछले पांच दशक में पर्यावरण के मुद्दे, जलवायु परिवर्तन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किसी भी बहुपक्षीय वार्ता का प्रमुख अंग रहे हैं। विश्व के सभी देशों ने व्यापक तौर पर यह स्वीकार कर लिया है कि आर्थिक वृद्धि और सामाजिक विकास बहुत हद तक पर्यावरण की सुरक्षा और उसपर होने वाले मानवीय प्रभाव में कमी पर निर्भर करता है, लेकिन ये अहम मुद्दे भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति का शिकार है। आइए इसे समझते हैं।

हालांकि, पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन को लेकर विकसित, और विकासशील देश दोनों प्रतिबद्धता जताते हैं, लेकिन दोनों खेमों के नजरियों में काफी भिन्नता है। दोनों के हित में भी बड़ा अंतर है। भारत जैसे विकासशील देशों का मानना है कि ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के लिए मुख्य रूप से औद्योगीकृत देश जिम्मेवार हैं। और इसी से जलवायु परिवर्तन के खतरे को कम करने के उपायों पर आने वाली लागत का मुख्य भार औद्योगीकृत देशों को उठाना चाहिए, साथ ही विकसित देशों को पूरी दुनिया को स्वच्छ उर्जा की प्रौद्योगिकी सुलभ करना चाहिए। लेकिन इन बिंदुओं पर विकसित देश ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को पूरी तरह नकार कर वर्तमान में हो रहे कार्बन उत्सर्जन को ही आधार बनाने की वकालत करते हैं, ताकि भारत, चीन और ब्राजील जैसे तेजी से विकास कर रहे देशों पर जिम्मेदारी थोपी जा सके। स्थितियां ऐसी बन गई हैं जहां ग्लोबल नॉर्थ (विकसित देश) और ग्लोबल साउथ (विकासशील देश) के बीच अविश्वास की खाई बढ़ती जा रही।

भारत का रुख

पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन को लेकर भारत का रूख शुरू से समतावादी रहा है। लेकिन समता का यह सिद्धांत सुनिश्चित करता है कि जलवायु परिवर्तन से निपटने के देशों के प्रयासों को इतिहास और वर्तमान में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में उनके योगदान तथा भविष्य में उनके द्वारा होने वाले संभावित उत्सर्जन को ध्यान में रखकर देखा जाए।

भारत 'साझा लेकिन विभेदित जिम्मेदारियों' (सीबीडीआर–आरसी) के सिद्धांत की जोरदार वकालत कार्य है, जो इस तथ्य पर आधारित है कि विकासशील देशों का कुल संचयी उत्सर्जन में अपेक्षाकृत नगण्य योगदान है और प्रति व्यक्ति उत्सर्जन बहुत कम है।

भारत विकासशील देशों के ''प्रमुख उत्सर्जक'', ''जी20 भागीदार'' और ''अन्य विकासशील एवं उभरती अर्थव्यवस्थाओं'' जैसे किसी भी वर्गीकरण को खारिज करता है, क्योंकि उसका स्पष्ट मानना है कि ऐसा कोई भी वर्गीकरण राष्ट्रीय परिस्थितियों को नजरअंदाज करते हैं।

पेरिस समझौता

2015 में भारत सहित दुनिया के 200 से अधिक देशों ने जलवायु परिवर्तन को लेकर पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किए थे और दुनिया के तापमान को 1.5 डिग्री से अधिक ना बढ़ने देने की प्रतिबद्धता जाहिर की थी। इस प्रतिबद्धता के तहत ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम किया जाना है। इसके तहत हर देश को अपने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (एनडीसी) तय करने होते हैं और संयुक्त राष्ट्र के समक्ष पेश करने होते हैं।

भारत की ये प्रतिबद्धताएं वास्तव में प्रकृति का सम्मान करने, अंतर-पीढ़ीगत समानता और एक समान मानवता की भावना को शामिल करने के अपने सदियों पुराने सभ्यतागत मूल्यों में निहित है। इन्हीं संकल्पों के साथ भारत ने 2015 में पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किए और अक्टूबर 2016 में समझौते की पुष्टि की और जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध युद्ध में स्वयं को एक जिम्मेदार वैश्विक खिलाड़ी के रूप में स्थापित किया।

पेरिस समझौते के अनुसार, भारत ने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान यानी एनडीसी को भी तय किया और अपने लिए इन लक्ष्यों को निर्धारित किया: उत्सर्जन तीव्रता को जीडीपी के लगभग एक-तिहाई तक कम करना, बिजली की कुल स्थापित क्षमता का 40% गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों से प्राप्त करना, और 2030 तक वन और वृक्ष आवरण के माध्यम से 2.5 से 3 बिलियन टन कार्बन डाइऑक्साइड के अतिरिक्त कार्बन सिंक (वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करने का एक साधन) के प्रति प्रतिबद्धता।

तीन वर्ष पूर्व ग्लासगो में आयोजित हुए संयुक्त राष्ट्र जलवायु सम्मेलन में इन संकल्पों की सिद्धि के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने घोषणा की कि भारत 2070 तक वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों में अपना योगदान शून्य कर लेगा। यह एक महत्वकांक्षी घोषणा थी, और इसके साथ ही भारत संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, यूरोपियन यूनियन और चीन जैसे देशों की कतार में शामिल हो गया जिन्होंने आने वाले वर्षों में नेट जीरो की घोषणा कर रखे हैं। नेट-जीरो से तात्पर्य ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन को शून्य करना है।

इसके साथ ही भारत ने पहली बार विश्व मंच पर पांच सूत्रीय पंचामृत की संकल्पना भी प्रस्तुत की। ये पांच सूत्र हैं – देश की गैर-जीवाश्म ईंधन आधारित ऊर्जा क्षमता को 2030 तक 500 गीगावाट तक बढ़ाना, वर्ष 2030 तक देश की 50% ऊर्जा आवश्यकताएं नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से पूरी की जाएंगी, देश अब से लेकर वर्ष 2030 के बीच कुल अनुमानित कार्बन उत्सर्जन में एक अरब टन की कमी लाएगा, 2030 तक अर्थव्यवस्था की कार्बन तीव्रता 45% से भी कम करना और भारत को कार्बन तटस्थ बनाना और वर्ष 2070 तक शुद्ध शून्य उत्सर्जन हासिल करना।

पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन पर भारत की हालिया उपलब्धियां

भारत ने अपने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (एनडीसी)-पेरिस समझौते के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय जलवायु योजना के तहत तय किए गए मात्रात्मक और गुणात्मक लक्ष्यों को निर्धारित समय से नौ साल पहले पूरा कर लिया है। ये दो लक्ष्य थे: अपने सकल घरेलू उत्पाद-जीडीपी की उत्सर्जन तीव्रता को 2005 के स्तर से 2030 तक 33 से 35 प्रतिशत तक कम करना; और 2030 तक गैर-जीवाश्म ईंधन पर आधारित ऊर्जा संसाधनों से लगभग 40 प्रतिशत संचयी विद्युत स्थापित क्षमता प्राप्त करना।

भारत ने पर्यावरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार लागू किए हैं और अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन, आपदा लचीलेपन और बुनियादी ढांचे के लिए गठबंधन और इंटरनेशनल बिग कैट एलायंस जैसी कई प्रमुख पहल शुरू की हैं। साथ ही, भारत ने 2028 में अंतरराष्ट्रीय जलवायु वार्ता (सीओपी33) की मेजबानी करने का प्रस्ताव रखा है।

भविष्य की चुनौतियां

संयुक्त राष्ट्र की एक हालिया रिपोर्ट में कहा गया है कि पेरिस में तय किए गए लक्ष्यों को हासिल करने के लिए अभी भी देश उस गति के साथ कदम नहीं उठा रहे।

विकसित देशों ने अब तक इस बात के कम संकेत दिए हैं कि वे आगे बढ़कर अपनी जिम्मेदारियों का वहन करेंगे। इसी महीने इटली में आयोजित दुनिया के सबसे अमीर देशों के राष्ट्राध्यक्षों के शिखर सम्मेलन में जलवायु वित्त के विषय को गर्मजोशी भरे शब्दों के साथ टाल दिया गया। एक अनुमान के मुताबिक, चीन को छोड़कर विकासशील देशों को जलवायु संकट से निपटने के लिए सालाना लगभग 2.4 ट्रिलियन डॉलर की आवश्यकता होगी। और जालवायु परिवर्तन से निपटने के लिए जरूरी यह राशि कैसे प्राप्त होगी, यह अभी भी भविष्य के गर्त में है।

नवंबर में अजरबैजान के बाकू में एक बार फिर पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन पर आगे की राह बनाने को इकट्ठा होगी। इस महत्वपूर्ण बैठक के पांच महीने से भी कम समय बचे हैं, लेकिन लगता नहीं कि विश्व समुदाय मानव अस्तित्व के लिए सबसे बड़े संकट पर कोई आम राय बना पाएगा।

कविता

विद्याधर कुलश्रेष्ठ 'कुसुम' की कविता

अर्घ्य-दान

लो अस्थि-अर्घ्य, हे मां स्वतंत्रते!
हमने आज युगों के ऋण का भार चुका ही दिया !
हाय, पशु ने युग के भगवान-प्राण का रक्तपान कर
मानव के उन्नत मस्तक को आह, झुका ही दिया !
मृत्यु को विजित किया था
जिसने अपने शत-शत बलिदानों से,
कैसे मानूं वही मनुष्य मौत की गोदी में
लयमान सदा के लिए मौन सो गया !
अरे यह क्या से क्या हो गया !
देह से प्राण खो गया! नहीं, नहीं यह भ्रम है,
अक्षय पुरुष नष्ट हो जाए; बात यह अविश्वास के योग्य,
सृष्टि का संचालक मर जाए;
कथा यह पूर्ण-प्रमाण-असम है।
याद आ रही मुझे आज से दो सहस्त्र वर्षों की बीती घटा,

घुमड़कर जो बरसी थी;
और नयन की ज्योति जिन्दगी की सीमा पर !
एक बार यीशु के तप्त रक्त से मानव-पशु ने स्नान किया था!
मानव-शोणित-पान युगों की बड़ी पुरानी,
चिर-पहचानी हुई कहानी।
पर क्या उस दिन सचमुच यीशु सूली पर चढ़कर
सदियों की चादर में ढक सके ?
मूक हो सके ? सीजर और हुसैन,
मुहम्मद को शव करके मौत मौत रह सकी ?
कहूंगा, हां, बस, उस दिन से दुनिया में मृत्यु सांस पा गई,
जिन्दगी का विकास पा गई !
हिंसा और अहिंसा का संघर्ष,
प्रेम और घृणा, सत्य से हा!

असत्य का युद्ध,
क्रुद्ध होकर अशुद्ध भावना बुद्ध पर टूट पड़ी है आज।
कंस की मोहन पर तलवार;
दैत्य रावण ने नयन तरेर किया
भगवान राम पर वार!
मनुज की बुद्धि स्वयं अभिशाप,
और बल-शक्ति, तुझे धिक्कार!
देख ले, स्वयं पैर को काट

अपाहिज मानवता असहाय कर रही अपना ही उपहास !
हंस रहा युग-युग का इतिहास!
कुंभ में किया स्वयं ही छेद तुझे जब लगी प्यास !
मिला जब समाचार देश का प्यार आज खो गया,
मुक्ति का द्वार बन्द हो गया, चकित-सा किंकर्तव्यविमूढ़
हृदय का स्पन्दन भी सो गया !
किसी ने कानों में आ कहा- 'आज भगवान मर गया है!'
हृदय में सहसा उठी मरोर,
भीग-से गए दृगों के कोर, प्राण के तार बोल-से उठे-
'कहां भगवान ? कौन भगवान ?
झूठ सब बात, मात्र यह सत्य-हाय 'इन्सान' मर गया है।'
वही इन्सान जिसे पा भूमि स्वर्ग को भी देती ललकार,
वही इन्सान जिसे देवत्व ललचकर लेता कभी निहार !
आज वह शेष; घृणित यह देश दैत्य की पशु-आत्मा का वास,
मात्र मानव का वेश! देव, तुम गए; क्षमा अपराध !
अभी तो तुम कण-कण में व्याप्त, कथा यह कहां समाप्त !

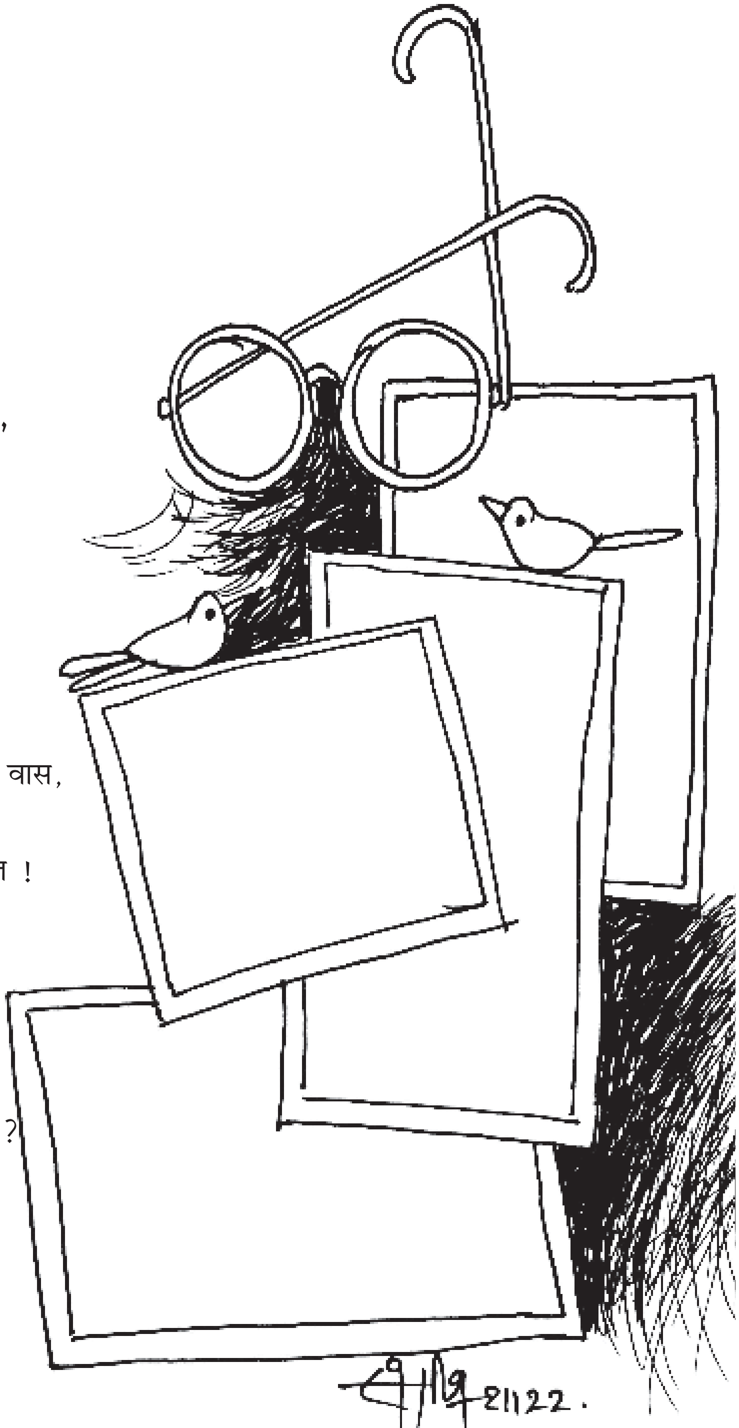

हमारे प्राणों के भी प्राण!
हमारे गानों के भी गान! फूल के नयन मुंद गए,
किन्तु शेष है अमर सुरभि का दान।
तुम्हारी ज्योति-पुंज-अभिभूत रश्मियों का फैला है जाल।
मौन हैं वात तुम्हारे किन्तु मौन क्या हो सकते स्वर-ताल ?
दिशाएं भी भरती हैं साक्ष्य ?
हृदय में करने को लयमान तुम्हारे गीतों का
स्वर-सांस फैलता जाता है आकाश!

राष्ट्र ने आंचल दिया पसार, देव, दो शक्ति,
अचल तव भक्ति और विश्वास प्राप्त कर सके।
तुम्हारा दान, विश्व का त्राण; तुम्हारे गीत, सृष्टि-निर्वाण !

चित्रकारी

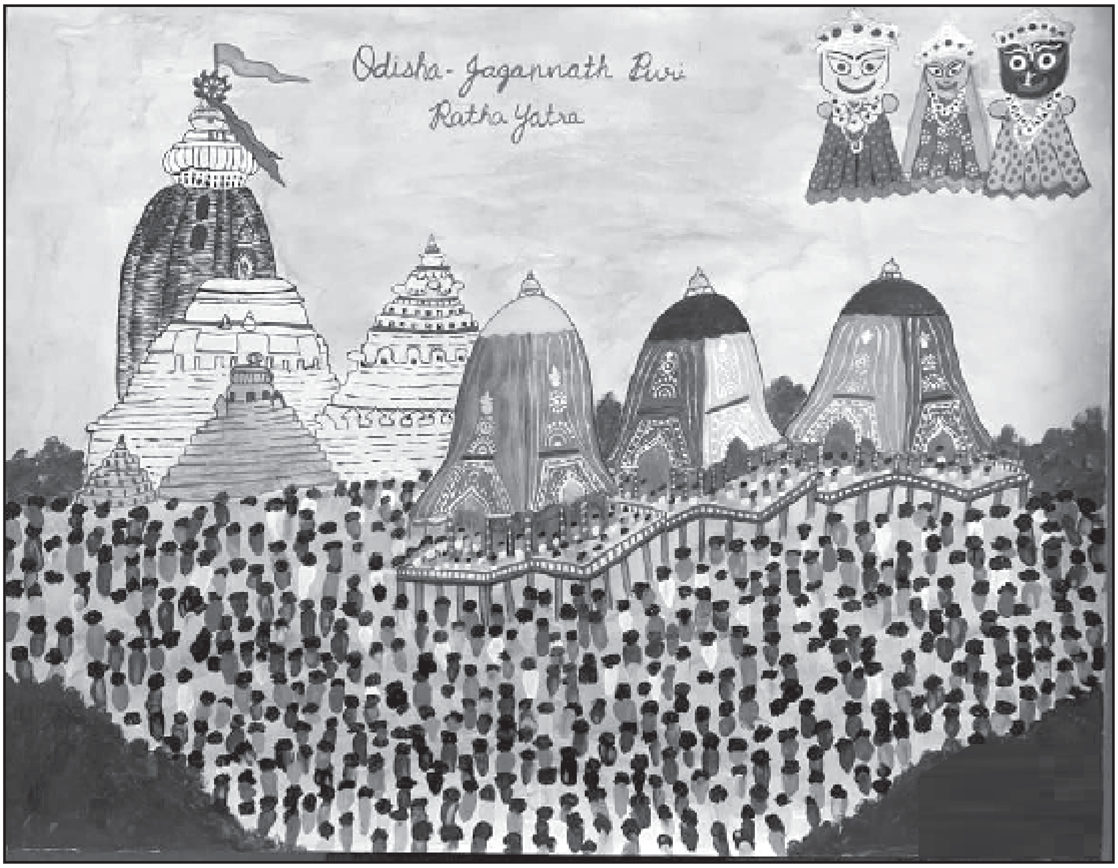
Odisha-Jagannath Puri
Ratha Yatra

शारन्या पाठक
स्कूलः होली इनोसेंस पब्लिक
स्कूल, विकास पुरी, दिल्ली

फोटो में गांधी

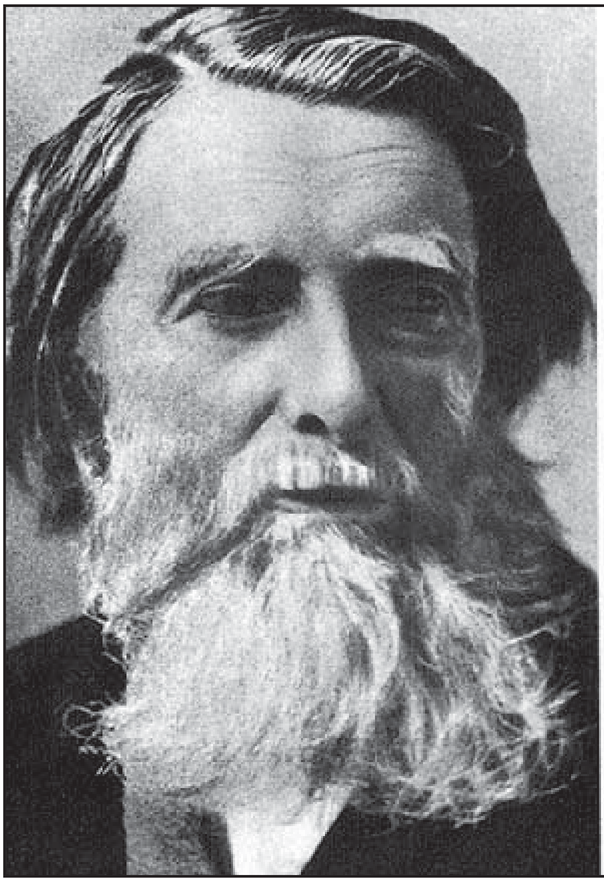

UNTO THIS LAST
JOHN RUSKIN

EDWARDVS VII REX IMPERATOR
VICTORIA REGINA ET IMPERATRIX

बाल कहानी

''दोनों हाथ''

अर्चना त्यागी

सोनू और गोलू के पिता उन दोनों के बीच अनबन से बहुत दुखी थे। गोलू, सोनू से दस साल छोटा था। माता पिता का उस पर स्नेह थोड़ा अधिक था। सोनू को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं थी। वह कहता, ''जबसे गोलू घर में आया है तबसे सब बदल गए हैं। मेरी ओर किसी का ध्यान ही नहीं जाता है। सब गोलू के आस पास ही घूमते रहते हैं। उसको ही छेड़ते रहते हैं। उसी से हंसते बोलते रहते हैं। खाने पीने की सब चीजें उसकी पसंद की ही आती हैं। कपड़े भी उसके लिए ही पहले आते हैं।'' मम्मी पापा उसे समझाते लेकिन वह कहता, ''मुझे बड़ा और समझदार कहकर चुप करा देते हैं। गोलू के लाड लड़ाते रहते हैं।'' इसी सोच के चलते गोलू से उसकी नफरत बढ़ती जा रही थी। सोनू का ध्यान बस इसी बात पर रहता कि गोलू कोई गलती करे और सोनू मम्मी पापा से उसकी शिकायत करे। गोलू को कभी डांट पड़ जाती तो सोनू खुश हो जाता।

सोनू के मम्मी पापा उसे समझाने की पूरी कोशिश करते, ''बेटा, गोलू घर में सबसे छोटा है इसलिए सबको उससे लगाव अधिक है। ऐसा बिल्कुल नहीं है कि तुम से किसी को प्यार नहीं है। तुम गोलू से दस साल बड़े हो इसलिए सभी लोग तुम्हे समझदार मानते हैं।'' लेकिन सोनू के मन में जो बात बैठ गई तो बैठ गई।

रोज शाम के समय सोनू पार्क में खेलने जाता था। एक दिन खेलने गया तो रोते चिल्लाते हुए वापिस आया। उसके बाएं हाथ में चोट लगी थी। उसका दोस्त बंटी उसे घर तक छोड़ने आया था। पापा ऑफिस से आए तो तुरंत ही सोनू को डॉक्टर के पास ले गए। डॉक्टर ने जांच करके बताया, ''हाथ की हड्डी टूट गई है। प्लास्टर लगाना पड़ेगा।'' सोनू यह सोचकर दुखी था कि वह अपने काम ठीक से नहीं कर पाएगा परन्तु अंदर ही अंदर वह खुश था। जबसे उसे चोट लगी थी सबका ध्यान उसकी ओर ही था। मम्मी पापा सब भूलकर उसकी सेवा में लगे थे। और तो और गोलू भी उसके पास से नहीं जा रहा था। सोनू को जब प्लास्टर लगा तो गोलू बहुत रोया। उसे डर था कहीं भाई का हाथ ऐसा ही ना रह जाए। गोलू दौड़ दौड़ कर सोनू के सब काम कर रहा था। सोनू मन ही मन सोच रहा था, ''रोज इसके काम मुझे करने पड़ते थे आज इसकी बारी आ गई है। अच्छा ही हुआ।'' गोलू ने जिद करके अपनी छोटी सी चारपाई सोनू के पास ही बिछवाई। ''भैया को रात में भी कोई काम होगा तो परेशानी नहीं होगी।'' रोज सुबह सोनू से पूछता, ''भैया आपने देखा? कितना हाथ ठीक हो गया है?'' सोनू को हंसी आ जाती। मम्मी उसे समझाती ''एक महीने बाद ही अब हाथ का पता लगेगा।'' दूसरी ओर सोनू एकदम संतुष्ट था। वह जैसा चाहता था वैसा ही हो रहा था। पंद्रह दिन बीत गए। अब उल्टी गिनती शुरू हो गई थी। गोलू हर रोज कैलेंडर से एक तारीख काट देता। पापा मम्मी भी दिन में एक बार तो तारीख देख ही लेते कि किस तारीख को सोनू का प्लास्टर खुलना है?

अब सोनू की मनोदशा बदल रही थी। वह सोचने लगा था, ''अगर हाथ नहीं टूटता तो मम्मी पापा की परेशानी नहीं बढ़ती।'' मम्मी घर के सारे काम करने के साथ साथ उसके काम भी करती। जान पहचान वाले हाल चाल पूछने आते रहते थे। उनको भी समय देती। पहले जो छोटे मोटे काम सोनू कर देता था वो भी उन्हें ही करने पड़ते थे। पापा दिन भर अपने ऑफिस में रहते और रात में जागते हुए ही सोते थे। गोलू अब सोनू के सारे छोटे छोटे काम कर देता था।

सोनू को अब अपनी सोच पर पछतावा होने लगा था। मैं, सबके बारे में कितना गलत सोचता था। जल्दी से प्लास्टर हटे तो सबकी परेशानी खत्म हो।'' उसके हाथ का प्लास्टर कटने का दिन भी आ गया। जैसे ही प्लास्टर हटा, गोलू खुशी से चिल्लाया।, ''भैया का हाथ ठीक हो गया।'' वह डॉक्टर की सलाह को बहुत ध्यान से सुन रहा था। घर वापस आया तो पापा ने दोनों भाइयों को अपनी गोद में बिठा लिया। दोनों को बाहों में भरकर बोले, ''मेरे दोनों हाथ। रहेंगे साथ साथ।'' सोनू पापा की बात समझ गया। उसने गोलू को गले से लगा लिया और मम्मी पापा से अपने व्यवहार के लिए माफी मांगी। गोलू धीरे से उसका हाथ छूकर देख रहा था। सोनू की आंखें भर आई, ''गोलू मेरे भाई मुझे समझ क्यूं नहीं आया कि तू मुझे इतना प्यार करता है। हाथ टूटने पर मुझे समझ आया।'' गोलू दौड़कर गया और उसका बल्ला उठा लाया। ''चलो भैया खेलते हैं।'' सोनू भागकर गेंद उठा लाया और खेल शुरू हो गया।

संपर्कः 51, सरदार क्लब स्कीम, चंद्रा इंपीरियल के पीछे, जोधपुर राजस्थान।

मो.: 9461286131

रेहू और राघव की लापरवाही

पूजा भारद्वाज

रेहू और राघव दोनों बहन भाई पढ़ने में अच्छे थे । रेहू पांचवी और राघव छ्ठी कक्षा में पढ़ता था। वो दोनों पढ़ने में जितने होशियार थे उससे कहीं ज्यादा शरारती और हद दर्जे तक लापरवाह थे।

वो अपनी किसी भी चीज को ठीक जगह नहीं रखते। जहां मर्जी आई फेंक दिया सामान, जब जरूरत होती तब ढूंढते या मम्मी का सिर खपाते। मिल जाती तो ठीक नहीं तो नई मंगवा लेते।

उनकी इस आदत से उनकी मम्मी शालिनी बहुत ही परेशान रहती। वो उन्हें समझा समझाकर थक चुकी थी लेकिन दोनों की हालत एकदम चिकने घड़े सी थी। मम्मी की उनको समझाने की सारी तरकीबें नाकाम साबित हुई।

एक बार हुआ यूं कि उनकी दादी की तबियत बहुत खराब हो गई जिस वजह से मम्मी को दस दिन के लिए गांव जाना पड़ा और इसी बीच रेहू की साइंस टीचर ने पहले के चार पाठों का टेस्ट लेने की घोषणा कर दी और साथ ही किसी भी एक टॉपिक पर प्रोजेक्ट बनाने के लिए कहा। राघव को भी विज्ञान विषय पर प्रोजेक्ट और टेस्ट दोनों की तैयारी करनी थी। दोनों घर आए और प्रोजेक्ट से संबंधित सभी सामान किसी तरह यहां वहां से ढूंढकर और कुछ नया लाकर प्रोजेक्ट कार्य पूरा किया। प्रोजेक्ट बनाने में ही पूरी शाम निकल गई।

रात को पापा ने ऑफिस से आकर खाना बनाया। खाना खाने के बाद दोनों अपनी अपनी साइंस की नोटबुक ढूंढने बैठे जिसमें शुरू के चार अध्यायों के प्रश्न उत्तर लिखे हुऐ थे लेकिन नोटबुक मिले तब ना जब संभाल कर सही जगह पर रखी हो।

दोनों ने सारी किताबें उथल पुथल कर डाली, सभी कमरे खंगाल लिए लेकिन नोटबुक नहीं मिली। थक हारकर मम्मी को फोन लगाया लेकिन उन्होंने उठाया नहीं।

ऐसा दो तीन बार हुआ तो रेहू ने इस बार फोन दादी के नंबर पर मिलाया। उधर से फोन उठा और दादी मां की आवाज सुनाई दी – हेलो

हेलो, दादी मां

कौन , रेहू ?

हां, दादी मां।

कैसी हो मेरी बच्ची ?

मैं ठीक हूं। आपकी तबीयत कैसी है अब ?

कुछ सुधार हुआ है, जल्दी ही ठीक हो जाऊंगी तुम्हारी मम्मी की प्यार भरी देखभाल से, कहकर दादी हंसी।

दादी मां मम्मी कहां है ?

यहीं है मेरे पास। क्या हुआ ?

कुछ नहीं। एक जरुरी काम था उनको तीन चार बार फोन भी किया वो उठा ही नहीं रही। एक बार बात करवा दो।

हां, क्यों नहीं। लो शालिनी रेहू से बात करो, कहकर दादी ने फोन शालिनी को पकड़ा दिया ।

हां,, रेहू, बोलो बेटा क्या हुआ?

मम्मा, आप फोन क्यों नहीं उठा रही? कब से कॉल कर रहे हैं आपको?

अरे बाबू मेरा फोन किचन में चार्ज लगा हुआ है और यहां टीवी की आवाज में कुछ सुनाई नहीं दिया। अच्छा बताओ क्या काम है।

मम्मी हम लोगों की सांइस नोटबुक नहीं मिल रही। क्या आपको पता है कहां रखी है?

बेटा मुझे तो याद नहीं। देख लो किताबों में ही होगी।

नहीं मिली ।

किताबों की पूरी अलमारी देख ली ।

अच्छा । तो फिर आस पास ढूंढो तुम्हारे कमरे में ही मिलेगी।

सब कहीं ढूंढ चुके हम। कहीं नहीं मिली, रेहू ने उदास स्वर में कहा।

वहीं मिलेगी कल शांति से ढूंढना दोबारा ।

कल तो टेस्ट है मम्मा हमारा। नोटबुक्स आज ही चाहिए ।

ओह, तो यहां बैठी मैं कैसे बताऊं ?

चीजों को संभाल कर तो रखते नहीं अब भुगतो, कहकर मम्मी ने फोन रख दिया।

दोनों भाई बहन रुआंसे हो आए। आखिर कहां ढूंढे नोटबुक्स? तभी राघव की निगाह टेबल के नीचे रखे अखबार और पत्रिकाओं पर गई। उसने उम्मीद से वहां खोजा तो नोटबुक्स मिल गई दोनों की ।

नोटबुक्स मिलते ही वे पढ़ने बैठे लेकिन तब तक काफी रात हो गई थी । एक चैप्टर मुश्किल से ही पढ़ सके दोनों कि थकान के कारण ना चाहते हुए भी आंख लग गई और सोए तो फिर सुबह पापा के उठाने पर ही उठे । जब तक स्कूल के लिए आधा घंटा ही शेष रहा सो दोनों फटाफट तैयार हो अपने प्रोजेक्ट और बिना परीक्षा तैयारी के साथ स्कूल पहुंचे। प्रॉजेक्ट दोनों का सही बना था किन्तु टेस्ट में निल बटे सन्नाटा। नोटबुक समय पर नहीं मिलने के कारण टेस्ट की अच्छी तैयारी जो नहीं कर पाए थे। बुझा सा मन लिए दोनों घर आए।

रात को पापा ने उनके लटके चेहरे देखे तो पूछा, क्या हुआ तुम दोनों को ?

टेस्ट अच्छा नहीं रहा ?

तब राघव ने बताया, पापा कल हमारी नोटबुक नहीं मिली, मम्मी को भी नहीं पता था। इसलिए ढूंढने में ही सारा समय निकल गया। पढ़ ही नहीं सके। टेस्ट में तीन नंबर आए हैं मेरे और दीदी के दो।

दोनों बच्चों की मायूसी देखकर पापा बोले, ये तुम्हारी लापरवाही का नतीजा है।

लापरवाही? दोनों ने एक साथ कहा।

हां। मम्मी कितना समझाती है तुम लोगों को कि अपनी चीजों को उपयोग के बाद हमेशा संभाल कर रखो, पता नहीं कब काम आ जाए। एक बात गांठ बांध लो कि चीजें ठीक जगह पर रखने में उतना वक्त नहीं लगता जितना उन्हें इधर उधर रखकर भूलने के बाद ढूंढने में बर्बाद होता है। अपने सामान को सलीके से रखने पर घर भी साफ सुथरा रहता है और चीजें भी दोबारा आसानी से मिल जाती है। अगर तुम लोगों ने अपनी किताबें ठिकाने पर रखी होती तो कल इतना परेशान नहीं होना पड़ता ना ?

देख लिया ना छोटी सी लापरवाही के भी क्या नतीजे हो सकते हैं।

पापा की समझाइश दोनों भाई बहन के ऊपर असर कर गई। अगले दो दिनों में उन्होंने अपनी किताबें, कपड़े, खिलौने, जूते, जुराब सब व्यवस्थित कर डाले ।

जब मम्मी लौटी तो घर बिखरा ना पाकर बड़ी हैरान हुई।

बच्चों की ओर खुशी व आश्चर्य के साथ देखा तो दोनों मुस्कुराए और फिर आराम से सारी बातें बताने लगे।

मम्मी को जानकर अच्छा लगा कि गलती करके ही सही, अच्छी आदत तो सीखी दोनों ने और उन्होंने हंसकर दोनों बच्चों की पीठ थपथपा दी।

संपर्क:
हाउस नंबर –187, ककराला, पोस्ट – ककराला,
तहसील – कनीना, जिला – महेन्द्रगढ़, हरियाणा।
पिन कोड – 123027
मो. – 9729266239

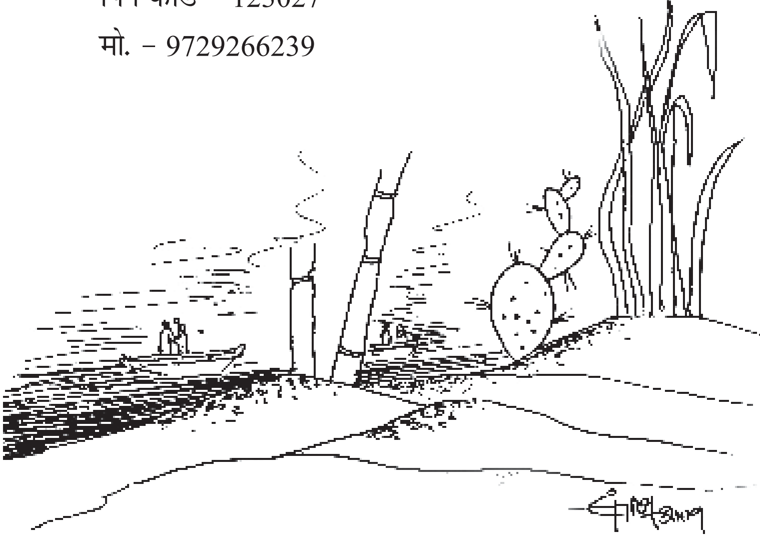

गांधी क्विज-3

प्रश्न 1. 'अनटू दिस लास्ट' के लेखक कौन हैं?

1. जॉन रस्किन
2. रस्किन बॉन्ड
3. हरमन कालेनबाख
4. लुई फिशर

प्रश्न 2. गांधीजी के अनुसार निम्नलिखित में से कौन सा, सत्याग्रह का एक आवश्यक सिद्धांत है?

1. कष्ट सहने की अनंत क्षमता
2. अहिंसा
3. सत्य
4. तीनों

प्रश्न 3. गांधीजी की ''सत्य के साथ मेरे प्रयोग'' मूल रूप से गुजराती में लिखी गई थी। इसका अंग्रेजी में अनुवाद किसने किया?

1. मगनलाल गांधी
2. महादेव देसाई
3. प्यारेलालजी
4. सुशीला नैय्यर

प्रश्न 4. निम्नलिखित में से कौन सी पुस्तक गांधीजी की रचना है?

1. भारत का प्रकाश
2. हिंद स्वराज
3. सत्य के साथ मेरे प्रयोग
4. 2 और 3 दोनों

प्रश्न 5. गांधी जी को नोबेल शांति पुरस्कार कब मिला?

1. 1937
2. 1947
3. 1939
4. कभी नहीं

प्रश्न 6. नेटाल इंडियन कांग्रेस की स्थापना किसने की?

1. वल्लभभाई पटेल
2. सरोजिनी नायडू
3. जवाहर लाल नेहरू
4. उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 7. गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत कब लौटे?

1. 1918
2. 1910
3. 1915
4. 1905

प्रश्न 8. पुस्तक 'सत्याग्रह' मूल रूप से लिखी गई थी

1. अंग्रेजी
2. हिंदी
3. गुजराती
4. बंगाली

प्रश्न 9. महात्मा गांधी जी के राजनीतिक गुरु कौन थे?

1. गोपाल कृष्ण गोखले
2. दयानंद सरस्वती
3. रवीन्द्र नाथ टैगोर
4. उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 10. दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी द्वारा स्थापित आश्रम का नाम क्या है?

1. वनिता आश्रम
2. टॉल्स्टॉय फार्म
3. फीनिक्स बस्ती
4. 2 और 3 दोनों

नोटः आप गांधी क्विज के उत्तर antimjangsds@gmail.com पर भेज सकते हैं। प्रथम विजेता को उपहार स्वरूप गांधी साहित्य दिया जायेगा।

गतिविधियाँ

गांधीदर्शन में उत्साह से मनाया गया योग दिवस

गांधी स्मृति एवम् दर्शन समिति द्वारा 10वाँ अंतरराष्ट्रीय योग दिवस महोत्सव गांधी दर्शन राजघाट में उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर वाल्मीकि नगर के सांसद सुनील कुमार मुख्य अतिथि थे। अध्यक्षता समिति के निदेशक डॉ ज्वाला प्रसाद ने की।

कार्यक्रम में 600 स्कूली बच्चों, शिक्षकों और स्टाफ सदस्यों ने योगाभ्यास किया। इस अवसर पर अपने संबोधन में सांसद श्री सुनील कुमार ने कहा कि योग भारतीय संस्कृति की पहचान है। प्रधानमंत्री जी की पहल पर आज विश्व के 172 देशों में योग दिवस मनाया जा रहा है। यह भारत के लिए गौरव की बात है।

अपने विचार व्यक्त करते हुए निदेशक डॉ ज्वाला प्रसाद ने कहा कि यह दिन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर योग के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक लाभों के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए मनाया जाता है।महात्मा गांधी भी प्राणायाम और आसनों को आम जीवन में उतारने की वकालत करते थे। यह हर्ष का विषय है कि आज पूरी दुनिया में योग के प्रति आकर्षण और योग की उपयोगिता भी बढ़ रही है।

समिति के प्रशासनिक अधिकारी संजीत कुमार ने सभी अतिथियों का आभार व्यक्त किया।

इस मौके पर विश्व संगीत दिवस भी मनाया गया, जिसमें मंजिल मिस्टिक्स के कलाकारों ने संगीतमय सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

समारोह में सुलभ इंटरनेशनल की सीनियर वाइस प्रेसिडेंट आभा कुमार, समिति के कार्यक्रम कमेटी सदस्य श्री प्रभात कुमार, श्री हर्ष छाबड़िया, कार्यक्रम अधिकारी डॉ वेदभ्यास कुण्डू सहित अनेक गणमान्य लोग उपस्थित थे।

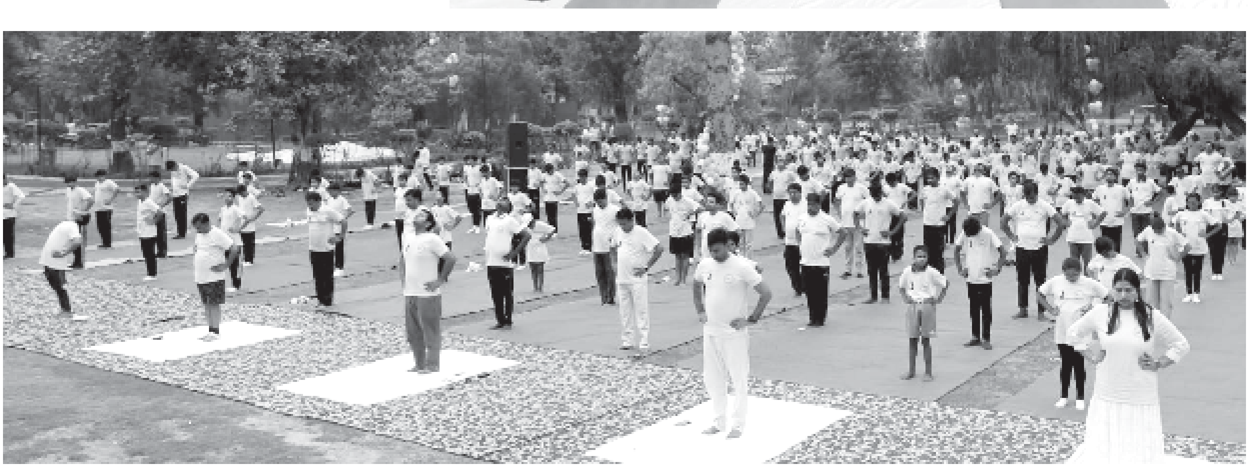

अग्नि सुरक्षा के सुझाए उपाय

गर्मी में आग लगने की बढ़ती घटनाओं के कारण, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति द्वारा आज दिनांक 24 जून, 2024 को सत्याग्रह मंडप, गांधी दर्शन, राजघाट में समिति के कर्मचारियों के लिए सतर्कता एवं जागरूकता प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम में समिति के प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार जी ने कर्मचारियों को अग्नि सुरक्षा के बारे में जानकारी दी।

श्रीलंकाई पुलिस अधिकारियों ने सीखी गांधी की अहिंसा

27 जून, 2024 को श्रीलंका पुलिस के अधिकारियों के 23 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल ने गांधी स्मृति का दौरा किया। समिति के शोध अधिकारी डॉ. सौरव कुमार राय और कार्यक्रम कार्यकारी श्री राजदीप पाठक ने प्रतिनिधिमंडल का स्वागत किया। उन्होंने शहीद स्तंभ पर श्रद्धांजलि अर्पित की और गांधी स्मृति संग्रहालय का दौरा किया

योग और समाधिः आत्मसाक्षात्कार के सोपान

21 जून, 2024 को अंतर्राष्ट्रीय योगदिवस के उपलक्ष्य में गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति ने गांधी दर्शन, राजघाट में 'योग और समाधि: आत्मसाक्षात्कार के सोपान' पर व्याख्यान का आयोजन किया। जिसमें दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदू अध्ययन केंद्र के निदेशक प्रो. ओम नाथ बिमली ने योग के जरिए आध्यात्मिक ऊंचाइयों को प्राप्त करने की सीख दी। समिति के निदेशक डॉ. ज्वाला प्रसाद ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। इस अवसर पर जाकिर हुसैन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. ए पी सिंह विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

श्री बिमली ने कहा कि ''पतंजलि के योग सूत्र'' योग के आठ अंगों (अष्टांग योग) को चित्रित करते हैं, जिसमें यम (नैतिक अनुशासन), नियम (पालन), आसन (शारीरिक मुद्राएँ), प्राणायाम (सांस पर नियंत्रण), प्रत्याहार (इंद्रियों को वापस खींचना), धारणा (एकाग्रता), ध्यान (ध्यान) और समाधि (अवशोषण) शामिल हैं। पतंजलि के अनुसार, ये चरण एक व्यापक ढांचा प्रदान करते हैं जो अभ्यासकर्ता को उस समाधि के लिए तैयार करता है, जो जीवन का अंतिम अंतिम लक्ष्य है और जहाँ व्यक्तिगत चेतना सार्वभौमिक चेतना के साथ विलीन हो जाती है। समिति के कार्यक्रम अधिकारी डॉ. वेदाभ्यास कुंडू ने स्वागत भाषण दिया, और प्रशासनिक अधिकारी श्री संजीत कुमार ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

फोटो - राकेश शर्मा, गणेश कुमार

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति

हमारे आकर्षण

गांधी स्मृति म्यूजियम (तीस जनवरी मार्ग)

* गांधी स्मृति म्यूजियम
* डॉल म्यूजियम
* शहीद स्तंभ
* मल्टीमीडिया प्रदर्शनी
* महात्मा गांधी के पदचिन्ह
* महात्मा गांधी का कक्ष
* महात्मा गांधी की प्रतिमा
* वर्ल्ड पीस गोंग

गांधी दर्शन (राजघाट)

* गांधी दर्शन म्यूजियम
* क्ले मॉडल प्रदर्शनी
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री (200 लोगों के लिये)
* सेमीनार हॉल (150 लोगों के लिये)
* कॉन्फ्रेंस हॉल (300 लोगों के लिये)
* प्रशिक्षण हॉल : (80 लोगों के लिये)
* ओपन थियेटर
* राष्ट्रीय स्वच्छता केन्द्र
* गेस्ट हाउस और डॉरमेट्री

(डॉ. ज्वाला प्रसाद)
निदेशक

प्रवेश निःशुल्क (प्रातः 10 बजे से सायः 6.30 बजे तक), सोमवार अवकाश
हॉल व कमरों की बुकिंग के लिये संपर्क करें– ईमेलः 2010gsds@gmail.com, 011-23392796

gsdsnewdelhi www.gandhismriti.gov.in

RNI NO. DELHIN/2018/76242

''आप मुझे जो सजा देना चाहते हैं, उसे
कम कराने की भावना से मैं यह बयान नहीं
दे रहा हूँ। मुझे तो यही जता देना है कि
आज्ञा का अनादर करने में मेरा उद्देश्य कानून
द्वारा स्थापित सरकार का अपमान करना
नहीं है, बल्कि मेरा हृदय जिस अधिक बड़े
कानून से-अर्थात अन्तरात्मा की आवाज को
स्वीकार करता है, उसका अनुसरण करना ही
मेरा उद्देश्य है।''

(मोहनदास करमचंद गांधी)

गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली
(एक स्वायत्त निकाय, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार)

प्रकाशक - मुद्रक : स्वामी गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के लिए पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली - 110092 से मुद्रित तथा गांधी दर्शन, राजघाट, नई दिल्ली-110092 से प्रकाशित।